विचार

नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली। गुरुवार, 11 अप्रैल 2024

कानून सिर्फ शब्द नहीं

सुप्रीम कोर्ट ने एक अहम फैसले में असम, नगालैंड, मिजोरम और अरुणाचल प्रदेश हाईकोर्ट के आदेश को पलटते हुए व्यवस्था दी कि चुनाव में किसी प्रत्याशी के लिए अपनी हरेक चल संपत्ति का ब्योरा देना जरूरी नहीं है। फैसला इस लिहाज से खास है कि इसमें मतदाताओं के साथ-साथ प्रत्याशी के अधिकार का भी ध्यान रखने की जरूरत पर जोर दिया गया है। इसके अलावा यह इस बात की ओर भी ध्यान खींचता है कि शब्दों पर जरूरत से ज्यादा बल देना कभी-कभी अनजाने ही कानून को निरर्थकता की ओर ले जाने लगता है।

SC : हर संपत्ति बताना जरूरी नहीं

प्रत्याशियों की निजता | चुनाव सुधारों की बात करते हुए अमूमन मतदाताओं के जानने के अधिकार पर ज्यादा जोर रहता है। इस फैसले ने ध्यान दिलाया है कि प्रत्याशी भी इस देश के नागरिक हैं। ऐसे में मतदाताओं के सूचित होने के अधिकार को समुचित महत्व देते हुए भी प्रत्याशियों के निजता के अधिकार की ओर से पूरी तरह आंखें मूंद लेना ठीक नहीं होगा।

कागजी खानापूर्ति | ध्यान रहे, जिस मामले में सुप्रीम कोर्ट ने यह फैसला दिया है उसमें प्रत्याशी पर तीन वाहनों की जानकारी न देने और सरकारी आवास से जुड़े नो ड्यूज सर्टिफिकेट जमा न करने का आरोप था। शीर्ष अदालत ने इस तथ्य की ओर ध्यान दिलाया कि तीनों वाहन भले ही कागज पर प्रत्याशी के परिजनों के नाम पर हों, लेकिन वे पहले ही बेचे या गिफ्ट किए जा चुके थे। ऐसे ही इस तथ्य को लेकर कोई विवाद नहीं था कि प्रत्याशी पर किसी तरह का बकाया नहीं था, बस नो ड्यूज सर्टिफिकेट जमा न करने की बात थी। सुप्रीम कोर्ट ने साफ किया कि इसे प्रत्याशी का निर्वाचन रद्द करने का आधार नहीं माना जा सकता।

सीधी लकीर नहीं | फैसले में कोर्ट ने यह भी कहा कि ऐसे मामलों में कोई एक लकीर नहीं खींची जा सकती कि कौन सी चल संपत्ति ब्योरा देने लायक है और कौन सी नहीं। हर केस के हिसाब से गौर किया जाना चाहिए। किसी प्रत्याशी के परिजनों की सामान्य घड़ी का ब्योरा देना अनावश्यक हो सकता है, लेकिन अगर किसी के परिवार में बेहद महंगी कई सारी घड़ियां हों तो उसका ब्योरा छिपाना अपराध हो सकता है।

व्याख्या की गुंजाइश | यहां इस सवाल से नहीं बचा जा सकता कि क्या इस फैसले से आगे ऐसे मामलों में अलग-अलग व्याख्याओं की गुंजाइश बन गई है, जिसका दुरुपयोग हो सकता है। क्या इसका फायदा उठाते हुए आगे चलकर कुछ प्रत्याशी ऐसी भी सूचनाएं छुपा सकते हैं, जो चुनाव और वोटर के लिहाज से अहम हों?

सतर्कता की जरूरत | जाहिर है इस संभावना को लेकर ज्यादा सतर्कता बरतने की जरूरत होगी। लेकिन इसमें संदेह नहीं कि सुप्रीम कोर्ट के इस फैसले ने इस अहम कानून की सार्थकता बढ़ाने और इसे प्रासंगिक बनाए रखने का काम किया है।

साड्डी दिल्ली

बदला शाहीन बाग

विवेक शुक्ला

आज ईद मनाई जा रही है। सब तरफ खुशियां ही खुशियां नजर आ रही हैं। इससे पहले जुमा अलविदा पर जामा मस्जिद से लेकर शाहीन बाग अलसुबह तक गुलजार था। इस दौरान इधर शॉपिंग इस तरह से हो रही थी कि मानो इस रात की सुबह होगी ही नहीं। आगे-आगे महिलाएं, और उनके पीछे उनके पति और बच्चे नजर आ रहे थे। शाहीन बाग का बदला हुआ माहौल गहरे संकेत दे रहा है। इसी शाहीन बाग में CAA के विरोध में महिलाओं की सरपरस्ती में 15 दिसंबर, 2019 से लेकर 24 मार्च 2020 तक चले धरने की गूंज दूर तक गई थी। वह बहुत भयानक दौर था। जब कोविड के कारण त्राहि-त्राहि मचने लगी, तब कहीं धरना समाप्त हुआ था। सवाल है कि इतने छोटे से अंतराल में ऐसा क्या बदला कि CAA विरोध का प्रतीक बन चुके शाहीन बाग की एक नई शक्ल सामने आने लगी?

शाहीन बाग राजधानी की नई फूड स्ट्रीट के रूप में उभरने लगा है। इधर, लजीज जायकों के साथ इंसाफ करने के लिए साउथ दिल्ली और नोएडा के लोग पहुंचने लगे। CAA विरोध की स्मृतियां धूमिल होने लगीं। मशहूर फुटबॉलर गौस मोहम्मद कहते हैं कि गृह मंत्री अमित शाह के भरोसे के बाद मुसलमान आश्वस्त हो गए कि CAA से वे प्रभावित नहीं होंगे। केंद्र सरकार ने बीती 11 मार्च को CAA कानून की अधिसूचना जारी कर दी थी। तब छिटपुट विरोध के स्वर उभरे थे। आशंका थी कि फिर से शाहीन बाग में हंगामा बरपेगा। पर कुछ नहीं हुआ। शाहीन बाग में फिर कोई धरने पर नहीं बैठा। अब वह आगे बढ़ना चाहता है। शाहीन बाग के एक रेस्तरां में रात करीब 11 बजे नॉन वेज डिशेज का आनंद लेते हुए कुछ नौजवान आपस में नई नौकरी, कार और इंक्रीमेंट की बातें कर रहे हैं। इनमें से एक से हमने CAA के बारे में पूछा तो जवाब दो ने दिया- 'हमारे लिए CAA का कोई मतलब नहीं है। इसका हमारे से कोई लेना-देना नहीं है।'

क्या लोकसभा चुनावों में CAA मुद्दा होगा? नोएडा की एक IT कंपनी में काम करने वाले अब्बास का कहना था, 'मुझे लगता है कि यंग जेनरेशन अपना वोट उसे देगी, जो हेल्थ, एजुकेशन और इन्फ्रास्ट्रक्चर पर फोकस करेगा। CAA दफन हो चुका है।' शाहीन बाग से हमने घर वापसी के लिए कैब ली। कैब के ड्राइवर के पास अखबार रखा था। बताने लगा कि वह रोज अखबार पढ़ता है। आज उसका ड्राइवर नहीं आया तो खुद कैब चला रहा है। वह खुरेजी में आयोजित धरने में बैठता था। उसने CAA का कसकर विरोध भी किया था। और अब? 'अब किसके पास वक्त है शाहीन बाग या खुरेजी के धरनों को याद करने का? सबने उसे भुला दिया है।' कैब NH-24 पर दौड़ रही थी। चारों तरफ रोशनी के बीच तेज रफ्तार ट्रैफिक था। कैब ड्राइवर हमें बता रहा था कि वह हमें छोड़कर अपने खुरेजी के घर में जाकर सहरी की तैयारी करेगा।

एकदा

जाओ माफ किया

सात अक्टूबर, 1938 का दिन था। बिहार की हरिनगर चीनी मिल के मजदूरों ने हड़ताल कर दी थी। मिल मालिक जमींदार मजदूरों की मांगें मानने को तैयार न था। उलटे उसने पुलिस से साठगांठ कर ली। नतीजा यह कि पुलिस ने मजदूरों को बहुत मारा। यह सूचना राहुल सांकृत्यायन को मिली। तब तक वह जयप्रकाश नारायण के कहने पर कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के सदस्य बन चुके थे। राहुल हरिनगर पहुंचे तो मजदूरों का हाल देख भाव विह्वल हो उठे। उन्होंने इसके प्रतिकार की योजना बनाई। सुबह राहुल सहित ग्यारह लोग गन्ने के खेत पर हंसुवा लेकर पहुंच गए। राहुल ने

Subrata Dhar

पीले कपड़े पहन रखे थे। जमींदार ने सैकड़ों लठैत खड़े कर रखे थे। एक हाथी को भी शराब पिलाकर मतवाला कर रखा था। साठगांठ के चलते पुलिस इंस्पेक्टर ने फोर्स मौके से दूर रोक रखी थी। राहुल के पीले कपड़े देख लठैतों की आगे बढ़ने की हिम्मत ही नहीं हो रही थी। इधर राहुल और उनके साथियों ने ईख काटनी शुरू कर दी। राहुल ने दो गन्ने काटे कि थानेदार ने उनको गिरफ्तार कर लिया। उधर जमींदार ने इशारा किया तो हाथी पर बैठे लठैत ने राहुल पर लाठी चला दी। लाठी उनकी खोपड़ी के बाईं ओर जोर से लगी, जिसकी वजह से बाद में उन्हें विस्मृति रोग भी हुआ। मगर राहुल तो राहुल! जेल पहुंचे, हड़तालें कीं और कुछ महीनों में फिर वहीं पहुंच गए, जहां उनका सिर फोड़ा गया था। वहां उन्होंने एक बड़ी जनसभा को संबोधित किया। इस बार राहुल का प्रताप देखकर न तो जमींदार सामने आया, और न ही उसके लठैत। हां, जिसने उन पर लाठी चलाई थी, उसके लिए उन्होंने अदालत में अर्जी लगाई कि उसे छोड़ दिया जाए, क्योंकि उसने खुद नहीं, बल्कि अपने जमींदार मालिक के कहने पर लाठी चलाई थी। यह राहुल की मानवीय संवेदना ही थी, जो दुश्मनों के साथ भी वैसी ही खड़ी होती थी, जैसी कि दोस्तों के साथ।

संकलन: **मंटू पाण्डेय**

महाराष्ट्र की बारामती सीट पर शरद पवार की बेटी सुप्रिया और बहू सुनेत्रा हैं आमने-सामने

पवार परिवार की विरासत होगी किसके नाम

गंगाधर ढोबले

बारामती में इस बार अभूतपूर्व मुकाबला है। NCP के दो धड़ों की यह निर्णायक लड़ाई है। इसमें अजित हारे तो BJP में उनका कद घट जाएगा और शरद पवार हारे तो उनके राजनीतिक जीवन का पटाक्षेप आरंभ हो जाएगा। अजित की उम्मीदवार उनकी पत्नी सुनेत्रा हैं, जबकि शरद पवार ने बेटी सुप्रिया सुले को उतारा है। इस तरह भौजाई और ननद के बीच यह दंगल है। उनके रूप में असल में भतीजे और चाचा की यह राजनीतिक लड़ाई है।

मिशन 45 पर नजर | NCP के इन दो धड़ों की तरह शिवसेना के एकनाथ शिंदे और उद्धव ठाकरे गुट भी टकरा रहे हैं। वहां भी इन दोनों का राजनीतिक भविष्य दांव पर लगा है। BJP इसका लाभ उठाकर अपना 'मिशन 45' पूरा करना चाहती है यानी महाराष्ट्र की कुल 48 लोकसभा सीटों में से 45 जीतना!

पवार का गढ़ | अब बारामती लौटते हैं। दो पवारों की इस लड़ाई में जो भी जीते वह होगा तो आखिर पवार ही! बारामती पिछले 55 वर्षों से पवार परिवार का गढ़ रहा है। शरद पवार 1967 से लेकर 1985 तक, पांच बार बारामती से और 2009 में एक बार सोलापुर जिले के माढ़ा से लोकसभा चुनाव जीत चुके हैं। इसी तरह अजित पवार 1991 में बारामती से लोकसभा पहुंचे थे। यही नहीं, 1991 से 2019 तक, वह सात बार बारामती से विधायक रह चुके हैं।

सुप्रिया की सक्रियता | सुप्रिया पहली बार 2006 में महाराष्ट्र से राज्यसभा पहुंचीं। इसके बाद 2009 से 2019 तक, तीन बार लोकसभा के लिए चुनी गईं। अब वह चौथी बार लोकसभा इलेक्शन लड़ रही हैं। सुनेत्रा का सामाजिक कार्य । दूसरी ओर, सुनेत्रा कभी राजनीतिक मैदान में नहीं उतरीं। लेकिन, पर्यावरण, ग्रामीण विकास और शिक्षा के क्षेत्र में सक्रिय हैं। बारामती हाई-टेक टेक्सटाइल पार्क की अध्यक्ष रह चुकी हैं। इस पार्क से 15 हजार ग्रामीण महिलाएं जुड़ी हैं। शरद पवार द्वारा स्थापित विद्या प्रतिष्ठान की वह उपाध्यक्ष हैं। यह प्रतिष्ठान कई स्कूल-कॉलेज चलाता है, जिनमें कोई 25 हजार छात्र पढ़ते हैं। पर्यावरण पर उनका इनवाइरमेंटल फोरम ऑफ इंडिया है, जो फ्रांस के NGO से भी जुड़ा है।

फैमिली बिजनेस
- बारामती से जीतता रहा है पवार परिवार
- सुप्रिया को है राजनीति का अनुभव
- सुनेत्रा सामाजिक कार्यों से जुड़ी रही हैं

पुरानी है अनबन | सुप्रिया इकलौती संतान हैं शरद पवार की। सदानंद सुले से 1991 में उन्होंने शादी की। उनके दो बच्चे हैं - रेवती और विजय। वहीं, सुनेत्रा धाराशिव (पूर्व नाम उस्मानाबाद) के प्रसिद्ध राजनीतिक परिवार से हैं। पद्मसिंह पाटिल की बहन हैं। उनके भतीजे राणा जगजीत सिंह पाटिल अभी BJP से विधायक हैं। सुनेत्रा के दो पुत्रों में से जय बिजनेस संभालते हैं, जबकि पार्थ राजनीति में हैं। पार्थ 2019 में मावल सीट से लोकसभा का चुनाव हार चुके हैं।

पहले पड़े थे बीज | उधर, सुनेत्रा के मायके वाले BJP में चले गए। अजित पवार की BJP से दोस्ती का धागा शायद यही है। सुप्रिया ने NCP तोड़ने और पवार परिवार में फूट डलवाने के BJP पर जो आरोप लगाए हैं, उसकी पृष्ठभूमि शायद यही है। मतलब यह कि आज बारामती में पवार खानदान में जो लड़ाई दिख रही है, उसके बीज काफी पहले पड़ चुके हैं।

प्रचार में झोंकी ताकत | इसका अंदाजा ननद सुप्रिया और भौजाई सुनेत्रा, दोनों को था। इसलिए दोनों खेमे काफी पहले से चुनाव की तैयारी कर रहे थे। सुप्रिया गांव-गांव जाकर लोगों से मिलती हैं। सुबह 8 बजे से ही उनके बहुत व्यस्त कार्यक्रम होते हैं, जो देर रात तक चलते हैं। पिता शरद पवार भी पूरे क्षेत्र का लगातार दौरा कर रहे हैं।

पति-पिता का सहारा | प्रचार के दौरान ननद-भौजाई एक-दूसरे पर व्यक्तिगत प्रहार कतई नहीं करतीं। ननद तो कहती हैं, 'वहिणी (भौजाई) मां के समान होती है। यही हमारी संस्कृति है।' प्रचार की शुरुआत में ही एक बार वह घड़ी आ गई जब दोनों की बारामती के हनुमान मंदिर में मुलाकात हुई। दोनों मुस्कुराते हुए एक-दूसरे से मिलीं। शायद यह राजनीतिक मुस्कान हो। वैसे हर चुनाव के पहले पवार परिवार का उम्मीदवार आशीर्वाद लेने इस मंदिर में पहुंचता रहा है।

विकास है प्राथमिकता | दोनों प्रचार में विकास के मुद्दे उठाती हैं। सुनेत्रा कहती हैं, 'लोग जब मिलते हैं तब दादा (अजित) की तारीफ करते हैं। वही हैं, जो विकास को बारामती खींचकर लाए।' उधर, सुप्रिया पिता शरद पवार और सांसद के रूप में अपने कामों की फेहरिस्त पेश करती हैं। सुप्रिया 55 की हैं तो सुनेत्रा 60 साल की। दोनों ही उच्च शिक्षित।

अजित खेमा हावी | बारामती संसदीय क्षेत्र में छह विधानसभा क्षेत्र आते हैं। इनमें से दो-दो तीन पार्टियों में बंटे हैं। भोर (संग्राम थोपटे) और पुरंदर (संजय जगताप) कांग्रेस के पास है, इंदापुर (दत्तात्रेय भाले) और बारामती (अजित पवार) NCP के पास, जबकि खड़कवासला (भीमराव तपकीर) और दौंड (राहुल कुल) में BJP के विधायक हैं। गौर करें तो लगता है कि चार विधानसभा क्षेत्रों में अजित पवार खेमा हावी है। कांग्रेस के दो क्षेत्र शरद पवार की ओर झुक सकते हैं।

सुनेत्रा का सिक्का | दौंड के विधायक राहुल कुल तो शरद पवार और सुप्रिया के कट्टर विरोधी माने जाते हैं। 2019 में सुप्रिया के खिलाफ उनकी पत्नी कांचन ने चुनाव लड़ा था। सुप्रिया को 53% और कांचन को 41% वोट मिले थे। कांचन, सुनेत्रा के चचेरे भाई विजय सिंह निंबालकर की पुत्री हैं। कांचन का परिवार में विवाह जोड़ने में सुनेत्रा अगुवा थीं। इस वजह से दौंड इलाके में सुनेत्रा का सिक्का चल सकता है।

बागियों का साथ | उधर, एकनाथ शिंदे, देवेंद्र फडणवीस और अजित पवार ने बागियों को एक-एक कर चुप करा दिया है। यह भी सुनेत्रा के पक्ष में जाएगा। महाराष्ट्र में दो राजनीतिक गठबंधन हैं, महायुति और महा विकास आघाड़ी। महायुति में BJP, शिंदे और अजित गुट सहयोगी हैं, जबकि महा विकास आघाड़ी में कांग्रेस, शरद पवार और उद्धव ठाकरे गुट मित्र दल हैं। दोनों गठबंधनों में आपसी खींचतान, मनमुटाव और एक-दूसरे के खिलाफ व्यूह रचना भी है। इसका असर बारामती में ननद-भौजाई की चुनावी लड़ाई में कितना और कैसा होगा यह 7 मई को मतदान के दिन ही दिखाई पड़ेगा।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं)

45 साल में सेंसेक्स 100 से 75,000 पार, आगे?

सिर्फ पांच साल में सेंसेक्स डबल हो गया। लेकिन यह जब से खुला है, तभी से देखें तो पिछले साढ़े चार दशकों के दौरान इसमें 15% की चक्रवृद्धि दर से तेजी बनी हुई है

रामदेव अग्रवाल

मुझे आज भी वह दिन याद है, जब मैंने पहली बार शेयर बाजार में निवेश किया था। वह साल था 1979, जब BSE सेंसेक्स की शुरुआत 100 अंकों के साथ हुई थी। 45 साल हो चुके हैं और इस दौरान 100 अंकों से बढ़कर यह 75,000 के करीब आ गया है। यानी सेंसेक्स में इस बीच 15.85% की चक्रवृद्धि दर से तेजी आई है।

दिवालिया होने का डर | सेंसेक्स की कहानी एक तरह से भारत की दास्तान भी है। 1979 में भारत की आर्थिक हालत अच्छी नहीं थी। तब उसकी GDP 130 बिलियन डॉलर थी और 1990 में देश करीब-करीब दिवालिया हो गया था।

जबरदस्त ग्रोथ | भारत को आजादी के बाद 1 लाख करोड़ डॉलर की GDP तक पहुंचने में 60 वर्ष लग गए। यह लंबा अरसा था, लेकिन 2 लाख करोड़ और 3 लाख करोड़ डॉलर की GDP तक पहुंचने में सात-सात साल ही लगे। और अब हम 4 लाख करोड़ डॉलर की GDP तक पहुंचने के करीब हैं। इसमें तो सिर्फ तीन साल का ही वक्त लगा है।

5वीं बड़ी इकॉनमी | इस ग्रोथ की बदौलत भारत आज दुनिया की पांचवीं बड़ी अर्थव्यवस्था है। दुनिया की तीसरी बड़ी अर्थव्यवस्था बनने के लिए भी हमें बहुत इंतजार नहीं करना पड़ेगा। बेशक, अर्थव्यवस्था और शेयर बाजार की इस कहानी में कई उतार-चढ़ाव आए हैं। 1992 में हर्षद मेहता घोटाला। साल 2000 में डॉटकॉम का बुलबुला। साल 2008-09 में वैश्विक वित्तीय संकट और फिर कोरोना महामारी के आने पर बाजार में बड़ी गिरावट के बाद तेजी का दौर।

15% की दर | अब आपके मन में यही सवाल आ रहा होगा कि 75,000 के बाद सेंसेक्स का क्या होगा? इस सवाल का जवाब कई तरह से दिया जा सकता है। पहली बात तो यह है कि 37,500 से 75,000 का सफर सेंसेक्स ने सिर्फ 5 साल में तय किया है। यह 15% चक्रवृद्धि दर है। यहां यह याद रखना चाहिए कि पिछले 45 वर्षों से सेंसेक्स की ग्रोथ यही रही है।

सेंसेक्स होगा डबल | दूसरी, भारत में कॉरपोरेट सेक्टर के मुनाफे में बढ़ोतरी पिछले

AI Image

कॉमन रूम

तीन दशकों में 17% की चक्रवृद्धि दर से हुई है। इसलिए आगे प्रॉफिट ग्रोथ 15% रहने का अनुमान लगाया जाए तो इसे ठीक ही माना जाएगा। आज मार्केट 25 के प्राइस टु अर्निंग रेश्यो पर ट्रेड कर रहा है। अगर भविष्य में भी उसे यही वैल्यूएशन मिलता है तो पांच साल में सेंसेक्स डबल हो जाएगा। यानी 2029 में यह 1,50,000 पर होगा।

छोटे निवेशक | यहां आलोचक यह सवाल कर सकते हैं कि सेंसेक्स पांच साल में भले ही 37,500 से 75,000 पर पहुंच गया, लेकिन इस स्तर से 1,50,000 तक पहुंचने की बात में कितना दम है? दरअसल, भारत में छोटे निवेशकों की ओर से एक क्रांति हो रही है। कोरोना महामारी से पहले हर महीने देश में 3,50,000 नए डीमैट खाते खुल रहे थे। आज यह आंकड़ा 30 लाख से ऊपर पहुंच चुका है। मार्च 2020 में डीमैट खातों की संख्या 4 करोड़ थी, जो आज 15 करोड़ पहुंच चुकी है। इस दौरान हर महीने SIP से म्युचुअल फंड में आने वाला निवेश भी 8,000 करोड़ से बढ़कर 19,000 करोड़ हो गया है।

विन-विन डील | इससे कंपनियों के लिए IPO से पैसा जुटाना आसान हो गया है। उन्हें धंधे में निवेश के लिए आसानी से ग्रोथ कैपिटल मिल रहा है। दूसरा, शेयर बाजार में तेजी से निवेशकों के हाथ में अधिक पैसा आ रहा है। इसका एक हिस्सा वे कंजम्पशन के लिए कर रहे हैं, जिससे GDP ग्रोथ अच्छी बनी हुई है।

आगे क्या होगा | सेंसेक्स की इस विकास यात्रा का एक आखिरी आयाम टेक्नॉलजी और डिजिटाइजेशन है। पहले देश में कई इक्विटी एक्सचेंज हुआ करते थे, आज सिर्फ दो हैं। ट्रेडिंग ऑनलाइन हो गई है। यह बात सही है कि कल क्या होगा, किसी को पता नहीं है। लेकिन इसकी काफी संभावना है कि पिछले 45 वर्षों से सेंसेक्स में जो 15% की चक्रवृद्धि दर से तेजी बनी हुई है, वह शायद आने वाले 45 वर्षों में भी बनी रहे।

(लेखक मोतीलाल ओसवाल फाइनैंशल सर्विसेज के चेयरमैन हैं)

THE SPEAKING TREE

और पढ़ने के लिए देखें

hindi.speakingtree.in

संपूर्ण कल्याण का संदेश देती है ईद में सेवइयों की मिठास

हफीज किदवई

आज ईद उल फित्र है। पवित्र रमजान के खत्म होने के बाद का त्योहार। पूरे एक महीने की कठिन तपस्या और त्याग के साथ ईश्वर के सामने संपूर्ण समर्पण के बाद ईद का त्योहार आता है। रमजान की दृष्टि से देखें तो ईद एक ऐसा उपहार है, जो आपको लंबी आराधना के बाद मिला है। रमजान की तरह ही ईद का भी जीवन में एक उद्देश्य है, दर्शन है, दृष्टि है। ईद के आध्यात्मिक संदेश में संपूर्ण मानवता की भलाई का सन्देश निहित है।

ईद मनाने से पहले व्यक्ति महीने भर अपने जीवन में कठिन अनुशासन को मानता है। रमजान अनुशासन का पर्व है। ईद उसी अनुशासन का फल है। इसे वही ग्रहण कर सकता है, जिसने रमजान के संदेश को समझा हो। ईद में सुबह नमाज से पहले ही प्रत्येक मुसलमान को फित्रा की रकम दूसरे कमजोर व्यक्ति को देनी होती है। फित्रा हर व्यक्ति को देना है, यानी करीब ढाई किलो गेहूं या उसकी कीमत के बराबर की रकम। जिस तरह रमजान में पूरे वर्ष की जकात देना जरूरी है, वैसे ही ईद के दिन फित्रा दिया जाता है ताकि आपके दरवाजे पर आया त्योहार हर उस दरवाजे पर भी दस्तक दे, जहां गरीबी और परेशानी है।

ईद का दूसरा सबसे बड़ा संदेश बराबरी का है। एक ओर जकात और फित्रा से आर्थिक बराबरी का संदेश दिया गया है। दूसरी ओर ईद के रोज हर एक से गले मिलकर सारे भेद भुलाने का संदेश दिया गया है। सामाजिक बराबरी के लिए आपस में गले मिलना सबसे बड़ा रास्ता है। जब आप ईद की खुशी में एक-दूसरे को बधाई देते हैं, तो उसमें गले मिलना उसका एक अंग है। उस समय चाहे कोई राजा हो या रंक, गुरु हो या शिष्य, पिता हो या पुत्र, शक्तिशाली हो या फिर कमजोर, सब आपस में बराबरी से गले मिलते हैं। बराबरी और भाईचारे का यह संदेश ईद का सबसे पवित्र संदेश है।

रमजान में जो प्रण किए, जिस अनुशासन का पालन किया, अध्यात्म के जिस शिखर को छुआ, जिस भूख और प्यास को महसूस किया, उसे याद रखने का नाम भी ईद है। ईद की सेवई चाशनी के साथ घुलकर संदेश देती हैं कि जिस ईश्वर ने तुम्हारी कड़ी तपस्या को देखा है, उसने तुम्हें ईद की सेवई की मिठास भी बख्शी है। यदि तुम जीवन भर इसी अनुशासन का पालन करोगे, अध्यात्म की ओर मन लगाओगे, सांसारिक लोभ से खुद को दूर करोगे, मानव कल्याण को प्राथमिकता दोगे, तो तुम्हारा सारा जीवन ईद की सेवई की मिठास से भर जाएगा।

ईद दिलों के मैल को धोने का भी दिन है। आप जिसे एक पल के लिए बर्दाश्त नही कर सकते, रमजान के पवित्र महीने में आपका दिल इतना तैयार हो जाता है कि वह किसी को भी बड़ी से बड़ी गलती के लिए माफ कर सकता है। ईद के रोज अपनी की हुई गलती या जिस किसी का आपने दिल दुखाया हो, उससे माफी मांगिए, उसके गले लगिए और प्रायश्चित कीजिए कि आप कभी ऐसा नही करेंगे। कोई आपसे माफी मांगे, तो तुरंत उसे माफ कीजिये, आगे बढ़कर गले लगाइये और कहिए, जिंदगी बड़ी छोटी है। हम इसे सेवई की मिठास के साथ इसे दोबारा खूबसूरत रास्तों पर लाते हैं। पैगंबर हजरत मोहम्मद साहब ने भी माफ करने को सबसे बेहतरीन रास्ता कहा है। आज जब ईद की बधाई देने के लिए आगे बढ़िए, तो ईद के इस बराबरी, भाईचारे और मानव कल्याण के संदेश को याद रखिए।

जीते कोई, वोट तो सेठी को ही गया!

शैलेंद्र पांडेय

चुनावों में पार्टियों और उम्मीदवारों की सबसे बड़ी पहचान होते हैं चुनाव चिह्न। इनके बनने और इन्हें बनाने वाले, दोनों की कहानी बड़ी दिलचस्प है। साल 1951-52 में जब देश पहले आम चुनाव की तैयारी कर रहा था, तब सबसे बड़ी बाधा थी उम्मीदवारों और दलों के पहचान की। उस समय भारत की साक्षरता दर थी 16% से भी कम। चुनाव आयोग के सामने संकट था कि जो वोटर पढ़े-लिखे नहीं हैं, वे अपनी पसंद के कैंडिडेट को कैसे वोट देंगे? काफी मंथन के बाद बैलेट पेपर का तरीका निकाला गया। हर उम्मीदवार के लिए एक अलग बैलेट बॉक्स बना, अलग रंग का। साथ ही, उम्मीदवारों को ऐसे चुनाव चिह्न अलॉट किए गए, जो रोजमर्रा के जीवन से जुड़े थे और जिन्हें आसानी से पहचाना जा सकता था। उम्मीदवारों के बैलेट बॉक्स पर उनका चुनाव चिह्न भी बनाया गया। मतदाताओं को अपना बैलेट पेपर पसंद के उम्मीदवार के बैलेट बॉक्स में डालना था, बस। और ये बैलेट पेपर छपवाए गए थे नासिक के उस इंडिया सिक्योरिटी प्रेस में, जहां इंडियन करंसी छपती थी।

टाइम मशीन

हर चिह्न पर चर्चा | पहले आम चुनाव में प्रत्याशियों को जो सिंबल मिले, उसके पीछे एक शख्स की मेहनत बहुत ज्यादा थी। उनका नाम था एमएस सेठी। उनकी नियुक्ति 1950 में हुई थी, चुनाव आयोग में ड्राफ्टमैन के रूप में। उनका काम था चुनाव चिह्न के स्केच बनाना। आयोग के अधिकारियों की टीम और सेठी इसके लिए साथ बैठते। उनके बीच चर्चा होती कि किन-किन चीजों को इलेक्शन सिंबल बनाया जा सकता है। झाड़ू, हाथी, साइकल, पतंग, गिलास जैसे सैकड़ों चुनावी चिह्न इसी तरह बने। जब भी किसी सिंबल पर राय बन जाती, तो सेठी उसका स्केच ड्रॉ करते। ये स्केच भी सिंपल होते थे ताकि आम लोग इन्हें आसानी से पहचान सकें। यह भी देखा गया कि कोई दो सिंबल एक जैसे न दिखें ताकि कोई कंफ्यूजन न रह जाए।

सिंबल इसलिए पुराने | इस चर्चा के दौरान कुछ ऐसे चिह्नों पर भी बात हुई, जो उस समय बहुत कॉमन नहीं थे, मसलन- नेक टाई और नेल कटर। उस वक्त बहुत थोड़ी आबादी ही इन दोनों का इस्तेमाल करती थी, खासकर वे लोग जो अंग्रेजी लिखना-बोलना जानते थे। तो इस तरह कई चीजें चुनावी चिह्न बनने से रह भी गईं। इससे समझ में आ जाती है कि आज भी चुनावों में ज्यादातर पुराने सिंबल क्यों दिखते हैं, क्योंकि ये सेठी के बनाए हुए हैं, उनके अपने दौर के।

बड़े काम की लिस्ट | सितंबर 1992 में सेठी रिटायर हुए। उनके बाद चुनाव आयोग ने वह पोस्ट ही खत्म कर दी। सेठी के जाने के करीब दशक भर बाद आयोग ने उनके बनाए चुनाव चिह्नों की लिस्ट जारी की, जिसे फ्री सिंबल्स कहते हैं यानी ऐसे चुनाव चिह्न जो किसी पार्टी के पास नहीं हैं। इसी लिस्ट में से निर्दलियों और गैर-मान्यता प्राप्त दलों को सिंबल मिलते हैं। नैशनल पार्टियों के चुनाव चिह्न रिजर्व्ड हैं, मसलन - कांग्रेस का हाथ का पंजा, BJP का कमल।

हाथी ढंके गए | चुनाव चिह्न को लेकर इलेक्शन कमिशन कितना सतर्क रहता है, इसका उदाहरण 2012 के यूपी विधानसभा चुनाव में देखने को मिला। तब आयोग ने नोएडा और लखनऊ में BSP सुप्रीमो मायावती की तरफ से बनवाए गए पार्कों में लगी हाथी की मूर्तियों को ढकवा दिया था। BSP का भी सिंबल हाथी है। ऐसे में राजनीतिक दलों की ओर से आपत्ति जताई गई थी।

पंखे हटाने का निर्देश | इससे भी एक रोचक घटना हुई थी गुजरात में, 2010 के एक उपचुनाव में। एक पोलिंग स्टेशन पर पहुंचे ऑब्जर्वर ने सारे पंखे हटाने का आदेश दे दिया। उस वक्त गर्मी चरम पर थी। पंखे हट जाते, तो उमस और गर्मी में काम कैसे होता? स्थानीय अफसरों ने ऑब्जर्वर को समझाने का प्रयास किया, पर वह अपनी बात पर अडिग थे। दरअसल, उस इलेक्शन में खड़े एक निर्दलीय प्रत्याशी का चुनाव चिह्न पंखा था। ऐसे में ऑब्जर्वर को लगा कि बूथ के भीतर लगे पंखों को देखकर मतदाता प्रभावित हो सकते हैं। स्थानीय प्रशासन को बहुत मेहनत करनी पड़ी ऑब्जर्वर को समझाने के लिए और तब कहीं जाकर पंखे चलते रह पाए।

कम न पड़े टैलंट पूल

प्रणव प्रियदर्शी

इंडस्ट्री में महिलाओं की सशक्त मौजूदगी और उनके बढ़ते प्रभाव का ही संकेत कहिए कि वहां उनके होने की अहमियत ही नहीं, उनके न होने के नुकसान को लेकर भी संवेदनशीलता बढ़ती जा रही है। इसी का नतीजा है कि महिला कर्मचारियों और अधिकारियों की एक समय गोपनीय मानी जाने वाली जरूरतों पर न केवल विचार-विमर्श हो रहा है बल्कि उन्हें ध्यान में रखते हुए नीतियां बनाई और बदली जा रही हैं। मिसाल के तौर पर मेनोपॉज (मासिक धर्म का बंद होना) को लें तो HSBC India, IBM, स्टैंडर्ड चार्टर्ड बैंक, नेटवेस्ट और इंटुइट (Intuit) जैसी कंपनियां इस मामले में महत्वपूर्ण पहलकदमी कर रही हैं। यहां इस बात के खास प्रयास किए जा रहे हैं कि महिलाएं मेनोपॉज को सहज रूप में लें और जीवन के इस फेज को आसानी से पार कर लें। उनके लिए 24 घंटे काउंसलिंग, विशेष छुट्टियां, फ्लेक्सिबल टाइमिंग आदि की व्यवस्था की जा रही है और इंश्योरेंस पॉलिसी में भी आवश्यक बदलाव किए जा रहे हैं।

AI Image

सवाल उठता है कि आखिर ये बड़ी कंपनियां इस तरह के कदम क्यों उठा रही हैं? वे कौन से कारक हैं जो इनके मैनेजमेंट को इस तरह सोचने की प्रेरणा दे रहे हैं? जवाब इस तथ्य में है कि भारत में महिलाओं में मेनोपॉज की औसत उम्र 46.2 साल मानी जाती है जो पश्चिमी देशों के मुकाबले पांच साल कम है। यही वह उमर होती है, जिसमें आम तौर पर विमिन एम्प्लॉयीज सीनियर लीडरशिप रोल में आती हैं। मगर मेनोपॉज से गुजर रही महिलाएं अपनी शारीरिक और मानसिक परेशानियों के चलते प्रमोशन के लिए अप्लाई करेंगी इसकी संभावना बहुत कम हो जाती है। वे किसी भी तरह की अतिरिक्त जिम्मेदारियां स्वीकारने की इच्छुक नहीं होतीं। कुछ मामलों में तो काम छोड़ने तक का फैसला कर लेती हैं। लिहाजा, सीनियर रोल के लिए विमिन टैलंट पूल काफी कम हो जाता है। वर्कफोर्स में और खासकर सीनियर लीडरशिप रोल में महिलाओं की बढ़ी हुई भागीदारी के कारण इस बात का अहसास बढ़ा है कि उनके होने से कितना फर्क पड़ता है। यही वजह है कि इंडस्ट्री का जागरूक हिस्सा इन मसलों पर गंभीर और संवेदनशील हुआ है। उम्मीद की जाए कि यह रोशनी इंडस्ट्री और समाज के बाकी हिस्सों तक भी पहुंचेगी।

आधी दुनिया

रीडर्स मेल

www.edit.nbt.in

उद्धव की चली

यह पत्र 10 अप्रैल के संपादकीय 'एकजुटता का संदेश' से संबंधित है। महाराष्ट्र में जिस तरह कांग्रेस ने सबसे बड़ी पार्टी होते हुए भी 17 सीटों पर संतोष कर लिया, उससे साफ है कि उसने उद्धव ठाकरे को बड़ा भाई रहने का मौका दिया है। कांग्रेस यह अपेक्षा कर रही है कि इस बंटवारे के बाद उसे महाराष्ट्र में सफलता हासिल होगी। जब से एकनाथ शिंदे और अजित पवार ने अलग धड़ा बनाया और BJP के साथ मिलकर सरकार चला रहे हैं, तभी से महाराष्ट्र पर सभी की पैनी नजर है। वैसे एक बात तो तय है कि शिवसेना (UBT) के लिए सबसे ज्यादा 21 सीटें हासिल कर उद्धव ठाकरे ने बता दिया है कि विपक्षी गठबंधन में उनका दबदबा बना हुआ है।

बाल गोविंद, नोएडा

प्रकृति से छेड़छाड़ न हो

10 अप्रैल को एनबीटी संपादकीय पृष्ठ पर 'जलती, पिघलती, हिलती धरती' की प्रस्तुति बहुत अच्छी लगी। हर साल मार्च-अप्रैल से ही कई राज्यों में गर्मी का असर दिखने लगता है। इस बार मौसम के जानकारों ने ज्यादा गर्मी और लू की आशंका जताई है। ग्लोबल वार्मिंग पर्यावरण के साथ-साथ देश की आर्थिक व्यवस्था के लिए बेहद नुकसानदायक है। कुदरत को समझे बिना भविष्य को नहीं समझा सकता है। इंसान कुदरत पर भी विजय पाने की कोशिश में लगा है और उसका नुकसान भुगतना पड़ रहा है। अब भी वक्त है, प्रकृति से छेड़छाड़ बंद होनी चाहिए।

राजेश कुमार चौहान, ईमेल से

रिटायरमेंट की उम्र

देश में IAS, IPS, IFS और कई अन्य सरकारी सेवाओं में रिटायरमेंट की उम्र 60 से 62 वर्ष है। यहां तक कि चतुर्थ वर्गीय कर्मचारियों और डॉक्टर-इंजीनियर, शिक्षकों की सेवा निवृत्ति की उम्र सीमा भी तय है। लेकिन देश के नेताओं के लिए उम्र की कोई सीमा नहीं है। 73 वर्ष की आयु में भी नरेंद्र मोदी प्रधानमंत्री हैं। उन्होंने 75 वर्ष में रिटायरमेंट की बात कही है, तो क्या दो वर्ष बाद पद छोड़ देंगे? देश के और भी नेताओं के लिए रिटायरमेंट की उम्र तय होनी चाहिए।

पवन कुमार, ईमेल से

nbtedit@timesgroup.com पर अपनी राय नाम-पते के साथ मेल करें।

अंतिम पत्र

ए.के. एंटनी बोले, मेरा बेटा जीतना नहीं चाहिए - एक खबर

- यहां तो पुत्र मोह आदमी को अंधा करती रही है!

रोहित सक्सेना

आर.एन.आई. नं. 510/57© सर्वाधिकार सुरक्षित। लिखित अनुमति के बिना संपूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित। स्वत्वाधिकारी बैनेट, कोलमैन एण्ड कम्पनी लिमिटेड के लिए राजीव यादव द्वारा, 7 बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110002 से प्रकाशित तथा **टाइम्स ऑफ इंडिया प्रेस, साइट IV, औद्योगिक क्षेत्र साहिबाबाद** और प्लॉट नंबर 7-8, सेक्टर M-11, ट्रांसपोर्ट हब, इंडस्ट्रियल मॉडल टाउनशिप, मानेसर, हरियाणा से मुद्रित। फोन : 23302000 फैक्स: 23492047, पंजीकृत कार्यालय : दादाभाई नौरोजी रोड, मुंबई-400001। विमान सेवा शुल्क : 1 रु. प्रति कॉपी। नेपाल में कुल मूल्य : सोमवार से शनिवार : नेपाली 5 रु. ; रविवार : नेपाली 6 रु.

संपादक (दिल्ली मार्केट) : आशीष पांडे (इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अन्तर्गत उत्तरदायी)

बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 17 अंक 44

जलवायु मुद्दे और मौद्रिक नीति

भारतीय रिजर्व बैंक की इस वित्त वर्ष में मौद्रिक नीति समिति (एमपीसी) की पहली बैठक ने किसी को चकित नहीं किया। रिजर्व बैंक के गवर्नर का वक्तव्य, मौद्रिक नीति संकल्प तथा नीति प्रस्तुत होने के बाद मीडिया के साथ संवाद में रिजर्व बैंक के अधिकारियों ने यही कहा कि एमपीसी टिकाऊ आधार पर 4 फीसदी मुद्रास्फीति दर के कानूनी अनुदेश का पालन करने के लिए प्रतिबद्ध है। इस बात का स्वागत किया जाना चाहिए। इसके परिणामस्वरूप एमपीसी ने नीतिगत रीपो दर को लगातार सातवीं बार 6.5 फीसदी के स्तर पर अपरिवर्तित रहने दिया। चूंकि एमपीसी ने चालू वर्ष में अर्थव्यवस्था के 7 फीसदी की दर से विकसित होने का अनुमान जताया है, ऐसे में यह लगातार चौथा वर्ष होगा जब कम से कम 7 फीसदी की वृद्धि दर हासिल होगी। यह केंद्रीय बैंक को पर्याप्त नीतिगत गुंजाइश मुहैया कराता है कि वह मुद्रास्फीति पर ध्यान केंद्रित करे और अवस्फीति की प्रक्रिया को पूरा होने दे।

वृद्धि और मुद्रास्फीति दोनों अपेक्षाकृत अनुकूल हैं और टिकाऊ आधार पर चार फीसदी की मुद्रास्फीति दर हासिल करने की बात बाजार प्रतिभागियों द्वारा समझी जा सकती है परंतु यह आकलन भी करना होगा कि लक्ष्य कब तक हासिल होने की संभावना है। मौद्रिक नीति समिति का अनुमान है कि चालू वित्त वर्ष में मुद्रास्फीति की दर औसतन 4.5 फीसदी रहेगी जो लक्ष्य से ऊपर है। एमपीसी में तथा अन्य जगह यह दलील दी गई है कि 2 फीसदी की वास्तविक नीतिगत दर वृद्धि निष्कर्षों को क्षति पहुंचा सकती है। परंतु समिति का एक नजरिया यह भी है कि वास्तविक नीतिगत दर को मुद्रास्फीति के साथ देखा जाना चाहिए जिसके चालू वित्त वर्ष में लक्ष्य से ऊपर बने रहने की उम्मीद है। ऐसे में एमपीसी कितने समय तक रीपो दर को 6.5 फीसदी के स्तर पर बनाए रखेगी? मौद्रिक नीति रिपोर्ट भी गत सप्ताह जारी की गई थी और उसमें भी कुछ दिलचस्प संकेत हैं। रिपोर्ट में कहा गया है कि सामान्य मॉनसून और किसी नीतिगत झटके के सामने न आने की संभावना के साथ ढांचागत मॉडल यही बताता है कि 2025-26 तक मुद्रास्फीति की दर औसतन 4.1 फीसदी रहेगी। पेशेवर अनुमान लगाने वालों का कहना है कि चालू वित्त वर्ष में नीतिगत दरों में 50 आधार अंकों की कमी आ सकती है।

वृद्धि के मोर्चे पर राहत को देखते हुए यह संभव है कि एमपीसी शायद इस बात को लेकर पूरी तरह आश्वस्त होना चाहे कि मुद्रास्फीति टिकाऊ आधार पर लक्ष्य के करीब रहेगी और उसके बाद ही वह मौद्रिक राहत की दिशा में बढ़े। मुद्रास्फीति का तय लक्ष्य हासिल करने में मुख्य समस्या खाद्य कीमतों की अस्थिरता की वजह से देखने को मिल रही है। उदाहरण के लिए फरवरी में खाद्य मुद्रास्फीति की दर 7.8 फीसदी थी और इसने हेडलाइन दर में 70 फीसदी योगदान किया। कोर मुद्रास्फीति 3.4 फीसदी के साथ चालू श्रृंखला में निचले स्तर पर रही। खाद्य कीमतों की अस्थिरता का अनुमान लगाना हमेशा मुश्किल होता है। खासतौर पर अतिरंजित मौसम की घटनाओं को देखते हुए। हकीकत तो यह है कि खाद्य कीमतों की अस्थिरता निकट भविष्य में और मुश्किल हालात पैदा कर सकती है।

एमपीआर में प्रकाशित शोध में कहा गया है कि मुद्रास्फीति और उसकी अस्थिरता दोनों समय के साथ बढ़ सकते हैं। लगातार मौसमी झटकों के चलते सख्त मौद्रिक नीति की आवश्यकता पड़ सकती है। मुद्रास्फीति संबंधी अनुमान में तब्दीली आ सकती है और केंद्रीय बैंक की विश्वसनीयता प्रभावित हो सकती है। ऐसे में मुद्रास्फीति को नियंत्रित रखने के लिए उच्च नीतिगत ब्याज दर की आवश्यकता होगी और यह उत्पादन पर असर डालेगा। जलवायु मुद्दों के साथ-साथ खाद्य अर्थव्यवस्था का प्रबंधन मध्यम से लंबी अवधि में मौद्रिक नीति पर अहम असर डालेगा। फिलहाल तो ध्यान रबी के उत्पादन और मॉनसून पर रहेगा।

अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहा भारतीय विपक्ष

विपक्षी दलों को अच्छी तरह पता है कि उनका सामना किससे है? मोदी को सत्ता से हटाने की कोशिश से अधिक उनकी बातचीत के केंद्र में यह होता है कि भाजपा की सीटें कैसे कम की जाएं।

आम चुनावों के पहले चरण के मतदान को बमुश्किल एक सप्ताह से कुछ अधिक समय शेष है और प्रमुख दलों के घोषणा पत्र सामने आने लगे हैं। इस बीच चुनाव से जुड़े जनमत सर्वेक्षणों का पहला संस्करण भी आ चुका है। टेलीविजन चैनलों को लेकर भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के प्रतिद्वंद्वियों का भाव समझा जा सकता है। चैनलों के बारे में वे मानते हैं कि 'इनसे भला और उम्मीद ही क्या की जा सकती है?' परंतु डेटा रहित विश्लेषण से बेहतर है कि कुछ डेटा का विश्लेषण कर लिया जाए।

कुछ ढाबों और तीन टैक्सी चालकों से बात करके चुनाव नतीजों की घोषणा करने वाले हम पत्रकारों तथा पंडितों पर छोड़ दें तो हम अपने पसंदीदा नेताओं की जीत की घोषणा करके निश्चिंत हो सकते हैं। परंतु अगर नतीजे अलग हुए तो इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन (ईवीएम) को दोष दिया जा सकता है।

सच तो यह है कि इस चुनावी मुकाबले में भाजपा की बढ़त के बारे में बताने के लिए आपको किसी चुनाव विशेषज्ञ की जरूरत भी नहीं है। विपक्ष का महत्त्वाकांक्षी 'इंडिया' गठबंधन तालमेल बनाए रखने में संघर्ष करता दिख रहा है और भाजपा ने राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) को हुए नुकसान को दूर करने और उसका पुनर्निर्माण करने की दिशा में पहल कर दी है। विपक्षी दलों में ज्यादातर यही बात होती है कि नरेंद्र मोदी को कहां-कहां रोका जा सकता है, सत्ता से बाहर करने की बात तो दूर है।

फिलहाल तो हालात यही है, हालांकि विपक्ष का मानना है कि चुनावी बॉन्ड से जुड़े खुलासों ने उसके चुनाव अभियान को कुछ मजबूती प्रदान की है। भाजपा को 'वॉशिंग मशीन' बताने वाले नारे में दम है, मगर क्या यह इतना शक्तिशाली है कि विपक्ष की तकदीर बदल सके? अधिकांश विपक्षी नेता अभी भी तस्वीर को अधिक संतुलित नजरिये से देख रहे होंगे और वह यह कि मोदी को कैसे सीमित किया जाए? जनवरी के आरंभ में इंडिगो की एक उड़ान में एक विपक्षी नेता से मुलाकात हुई तो विपक्ष के विचारों की एक झलक मिली। एक परिवार के तीसरी पीढ़ी के इस वारिस को ऐसी पार्टी मिली जिसके पास जाति आधारित वोट बैंक है लेकिन उसका प्रभाव सीमित भूभाग में है। मैंने उनसे चुनावी संभावनाओं के बारे में पूछा और यह भी कि क्या उन्हें लगता है कि जाति आधारित वोट बैंक मोदी के आकर्षण में टिकेगा?

राष्ट्र की बात
शेखर गुप्ता

उन्होंने कहा कि जाति आधारित वोट बैंक आमतौर पर सुरक्षित होता है लेकिन जब लोग लोक सभा चुनाव के लिए मतदान करने जाते हैं तो उनके सामने एक ही विकल्प होगा। 'मतदाताओं को कैसे यकीन दिलाएंगे कि कोई विकल्प है?' उन्होंने पूछा। उन्होंने कहा कि उनकी पार्टी और विपक्ष ऐसा मुद्दा नहीं तलाश पा रहे हैं जो बड़ी संख्या में लोगों को सड़क पर उतारे। उदाहरण के लिए अगर आप अग्निवीर योजना का नाम लें तो केवल वहीं सड़क पर उतरेंगे जो इसके खिलाफ हैं। बाकी मतदाताओं को कोई फर्क नहीं पड़ेगा। मैंने पूछा, 'तो हल क्या है? क्या आपकी तीन पीढ़ियों की राजनीति अपने अंतिम दौर में है?'

उन्होंने कहा, 'इसे ऐसे देख सकते हैं मानो हम परमाणु युद्ध के बाद के दौर में हों। यानी जब तक यह दौर बीत नहीं जाता अपना अस्तित्व बचाए रखें। राजनीति में इसका अर्थ होगा अपने जातीय वोट बैंक को बचाए रखना, कम से कम कुछसीटें जीतना और अपने संसाधन बरकरार रखना। इस प्रकार समय बदलने की प्रतीक्षा करना।'

उनकी यह बात मुझे बहुत समझदारी भरी लगी लेकिन कुछ ही दिन बाद वे 'इंडिया' गठबंधन से निकल कर राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन में चले गए। शायद उन्हें अपने अस्तित्व को बचाने का यही तरीका नजर आया। कम से कम जब हालात बदलेंगे तो वे मुकाबले में बने रहेंगे और नए विकल्प तलाशेंगे।

खुद को बचाए रखना या लड़ाई को आगे के लिए टालना इस समय विपक्षी दलों के दिलोदिमाग में चल रहा सबसे प्रमुख विचार है। उनमें से हर एक के सामने अलग-अलग चुनौतियां हैं। ममता बनर्जी की तृणमूल कांग्रेस जैसी पार्टी की बात करें तो अगर वहां भाजपा वर्ष 2019 से अधिक सीट जीतती है तो उसकी उसकी राज्य सरकार अस्थिर होगी।

आम आदमी पार्टी (आप) चाहेगी कि दिल्ली में वह 2019 से बेहतर प्रदर्शन करे। उद्धव ठाकरे की शिव सेना (यूबीटी) और राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी का शरद पवार धड़ा, इन दोनों को अपने अस्तित्व के लिए जीत की जरूरत है। अखिलेश यादव की समाजवादी पार्टी और लालू-तेजस्वी यादव के राष्ट्रीय जनता दल को भी अगर 2019 जैसी हार का सामना करना पड़ा तो उनके भी अपने-अपने राज्य में सत्ता में लौटने का ख्वाब अधूरा रह जाएगा।

इन पार्टियों के पास भी सीमित फंड हैं। जहां वे सत्ता में नहीं हैं वहां वर्षों से फंड का सूखा पड़ा है और उनकी जमा पूंजी तेजी से खत्म हो रहा है। जो अभी भी किसी राज्य में सत्ता में हैं और पैसों वालों को प्रेरित करके धन जुटा सकते हैं वहां एजेंसियां धन देने वालों को भयभीत कर रही हैं।

ये तो हो गई एक राज्य वाले दलों की बात। आम आदमी पार्टी की बात करें तो इसे डेढ़ राज्य माना जा सकता है। कांग्रेस के लिए अलग तरह की चुनौती है। हाल के समय में पार्टी एकजुट रहने के लिए संघर्ष कर रही है। 2014 से 2019 के बीच उसकी इकलौती उपलब्धि रही 20 फीसदी मतदाताओं को अपने साथ जोड़े रखना। परंतु इसके बावजूद उसे इतनी सीट नहीं मिल सकीं कि पार्टी लोक सभा में नेता प्रतिपक्ष का दर्जा भी पा सके। पार्टी को अपने समर्थकों तथा विपक्षियों को यह यकीन दिलाने के लिए आखिर कितनी सीट जीतने की जरूरत है कि वह भविष्य में चुनौती बनेगी?

कह सकते हैं कि 100 सीट का आंकड़ा दिलचस्प होगा और भारत की राजनीति को बदलने वाला साबित हो सकता है। परंतु क्या यह हकीकत के करीब है? मैं समझता हूं कि अगर कांग्रेस आधिकारिक तौर पर यही कहेगी कि 'इंडिया' गठबंधन सरकार बनाने जा रहा है लेकिन उसके नेता अनुभवी हैं और जीत-हार दोनों का स्वाद चख चुके हैं। ऐसे में वे मानेंगे कि अगर 80 से अधिक सीट आती हैं तो यह उल्लेखनीय सुधार होगा। ऐसा इसलिए कि तुरंत बाद हरियाणा, महाराष्ट्र और झारखंड में विधानसभा चुनाव होने हैं।

चार जून को आने वाले चुनाव नतीजे इन अहम विधानसभा चुनावों की दिशा तय करेंगे। तीनों राज्यों में भाजपा के सामने मजबूत चुनौती है। अगर कांग्रेस 80 से अधिक लोक सभा सीट जीतती है तो झारखंड और महाराष्ट्र में उसके गठबंधन को मजबूती मिलेगी। अगर पार्टी वहां तक नहीं पहुंचती है तो वह विपक्षी गठबंधन में स्वाभाविक नेतृत्वकर्ता होने का दावा भी गंवा सकती है। लगातार तीसरी हार पार्टी को तो नुकसान पहुंचाएगी ही अन्य भाजपा विरोधी दल भी विकल्प तलाशेंगे। कुछ दल वह रास्ता भी अपना सकते हैं जो मेरे सहयात्री नेता ने चुन लिया।

तब भाजपा इतनी हड़बड़ी में क्यों नजर आ रही है? मोदी ऐसे प्रचार क्यों कर रहे हैं मानो वह पहली बार सत्ता में आने के लिए चुनाव मैदान में हैं? विपक्षी नेताओं पर छापे और गिरफ्तारियां क्यों हो रही हैं? यहां तक कि एक मुख्यमंत्री पद पर रहते हुए जेल में है? अगर पार्टी अच्छी स्थिति में है तो इतनी चिंतित क्यों दिख रही है? हम इनमें से कुछ सवालों के जवाब तलाशेंगे। एक उत्तर तो यही है कि मोदी और शाह की भाजपा का स्वभाव ही यही है। उनके लिए हर चुनाव जीवन-मरण का प्रश्न है। दूसरा, जैसा कि हमने चार सप्ताह पहले लिखा था कि मोदी 2024 नहीं 2029 के चुनाव की तैयारी कर रहे हैं। इस प्रक्रिया में विपक्ष को अधिक से अधिक नुकसान पहुंचाने से अच्छा क्या होगा। ताकि बचे हुए अपने भविष्य के बारे में सोचें? विपक्ष और खासकर कांग्रेस की यह चिंता उचित है कि देश पर एक व्यक्ति, एक दल, एक विचारधारा का ऐसा दबदबा कायम हो सकता है जैसा पहले कभी नहीं देखा गया। अगर वे इसे पसंद नहीं करते तो उन्हें मतदाताओं को यकीन दिलाना होगा लोकतंत्र के लिए यह अच्छा नहीं होगा। अब ज्यादा समय नहीं बचा है।

सभी निवेशकों का स्वागत करने का सही वक्त

अगर ऐपल जैसा कोई शीर्ष वैश्विक ब्रांड, भारत में रिकॉर्ड स्तर पर रोजगार के मौके तैयार कर सकता है तब बेवजह अधिक समय लगाने वाली 'लालफीताशाही' की व्यवस्था कायम करने के बजाय इनका स्वागत किए जाने के विचार को और अधिक तेजी से आगे बढ़ाया जाना चाहिए। अनुमानों से अंदाजा मिलता है कि अगस्त 2021 में उत्पादन से जुड़ी प्रोत्साहन योजना (पीएलआई) के लागू होने के बाद से भारत में ऐपल उत्पाद के निर्माण से प्रत्यक्ष नौकरियों के कम से कम 150,000 मौके तैयार हुए हैं।

अमेरिका के कूपर्टिनो की यह कंपनी, भारत में कुशल श्रमिकों के लिए रोजगार के अधिक मौके तैयार कर रही है। ऐपल ने इतने कम समय में जितने रोजगार के मौके तैयार किए हैं उतना देश के किसी भी निजी समूह या सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियों ने रोजगार के मौके नहीं दिए हैं।

दरअसल, 'लालफीताशाही' से 'लाल कालीन बिछाकर स्वागत करने' की बदलाव वाली रणनीति 10 साल पहले भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के चुनाव अभियान का एक अभिन्न हिस्सा था जब यह उस वक्त यह मुख्य विपक्षी पार्टी थी। वर्ष 2014 में कई राजनीतिक रैलियों में विदेशी निवेशकों का स्वागत किए जाने के कथ्य पर जोर दिया गया जिस पर दुनिया ने भी ध्यान देना शुरू किया।

वर्ष 2014 में और फिर 2019 में लोकसभा चुनाव जीतने के बाद, भाजपा की थीम भारतीयता से परिपूर्ण थी जिसमें 'मेक इन इंडिया' से लेकर 'बाई इन इंडिया' और 'ट्रैवल इन इंडिया' जैसी चीजें भी शामिल थीं। फिर भी, ऐपल से जुड़ी रोजगार सृजन की कहानी बताती है कि निवेशकों का स्वागत किए जाने की रवायत पहले भी कुछ तरीके से कायम रही है, हालांकि वैश्विक निवेशकों के लिए यह, सभी क्षेत्रों में समान रूप से नहीं रहा है।

वर्ष 2014 में भाजपा के प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार रहे नरेंद्र मोदी, निवेशकों का स्वागत जमकर किए जाने के सिद्धांत के पीछे की प्रेरक शक्ति थे और उन्होंने इस साल की शुरुआत में उत्तर प्रदेश के वैश्विक निवेशक सम्मेलन में भी यह बात दोहराई थी। प्रधानमंत्री ने फरवरी में कहा था कि उत्तर प्रदेश में 'डबल इंजन' वाली सरकार के सात वर्षों के दौरान लालफीताशाही की संस्कृति अब निवेशकों की सुगमता के लिए उनका खुलकर स्वागत किए जाने वाली संस्कृति में बदल गई है।

सामयिक सवाल
निवेदिता मुखर्जी

पिछले साल भी जी20 व्यापार और निवेश से जुड़ी एक वर्चुअल मंत्रिस्तरीय बैठक में मोदी ने निवेशकों का स्वागत करने पर जोर दिया। वैश्विक स्तर पर उन्होंने संदेश दिया था कि भारत लालफीताशाही के दौर के बाद अब निवेशकों को आमंत्रित करने की दिशा में आगे बढ़ चुका है और इसने 2014 से ही देश में 'बिना किसी बाधा के प्रत्यक्ष विदेशी निवेश' के अनुकूल माहौल बनाया है। उन्होंने इसी बैठक में यह भी बताया कि कैसे 'मेक इन इंडिया' और 'आत्मनिर्भर भारत' ने विनिर्माण को प्रोत्साहित किया है। इसके साथ ही उन्होंने जी20 के सदस्य देशों से भविष्य की चुनौतियों का सामना करने के लिए तैयार रहने के मकसद से एक समावेशी वैश्विक वैल्यू चेन बनाने का आग्रह किया है।

विदेशी निवेशकों का खुले दिल से स्वागत करने और 'मेक इन इंडिया' के लिए प्रोत्साहन देने जैसे कदमों के चलते ही ऐपल उत्पादों के निर्माण के साथ ही नौकरियों के मौके बने हैं। लेकिन यह प्रारूप सभी मामलों में कारगर नहीं हो सकता है। बेहतर नतीजे दिखने और गुणवत्ता पूर्ण नौकरियों के मौके तैयार करने के लिए निवेशकों को आमंत्रित करना जरूरी है और इसके लिए सभी क्षेत्रों में बिना किसी आपत्ति और विरोध के विदेशी निवेश नियमों में ढील देना ही रास्ता होना चाहिए।

भारत जैसे-जैसे अपने विनिर्माण को अगले स्तर पर ले जा रहा है और इलेक्ट्रिक वाहन (ईवी), अक्षय ऊर्जा, सेमीकंडक्टर और उच्च-स्तरीय संचार उपकरणों जैसे क्षेत्रों में आक्रामकता से आगे बढ़ रहा है, ऐसे में नीति निर्माताओं को बिना किसी आपत्ति वाली एफडीआई नीति पर विचार करना चाहिए। विचार यह होना चाहिए कि घरेलू स्तर से जुड़ी जटिल नीति में पड़े बिना बहुराष्ट्रीय कंपनियों को लाने की पहल की जाए।

हाल के उदाहरणों से पता चलता है कि भारत की कंपनियों को सेमीकंडक्टर उपकरणों का निर्माण करने के लिए साझेदारी करने की आवश्यकता है क्योंकि इस प्रक्रिया में तकनीकी जानकारी शामिल होती है। टाटा समूह का संयुक्त उद्यम ताइवान की पावरचिप सेमीकंडक्टर मैन्युफैक्चरिंग कॉर्पोरेशन (पीएसएमसी) के साथ है और यह वर्ष 2026 के अंत तक सेमीकॉन चिप का उत्पादन शुरू करेगी।

सेमीकॉन उपकरण आमतौर पर नैनोफैब्रिकेशन प्रक्रिया के जरिये बनाए जाते हैं जो प्रक्रिया शुद्ध क्रिस्टल सिलिकन से बने सब्सट्रेट की सतह पर होती है।

1970 के दशक में अमेरिका की एक प्रमुख इलेक्ट्रॉनिक्स कंपनी रेडियो कॉर्पोरेशन ऑफ अमेरिका (आरसीए) की शुरुआत के बाद ताइवान ने इस उद्योग में शुरुआती बढ़त हासिल की थी और यह सेमीकंडक्टर तकनीक देने के लिए राजी था जो इस क्षेत्र में सबसे बड़ा था। ताइवान सेमीकंडक्टर मैन्युफैक्चरिंग कंपनी (टीएसएमसी) की सेमीकॉन चिप निर्माण के वैश्विक बाजार में हिस्सेदारी कम से कम आधी है।

अक्षय ऊर्जा के मामले में भी, भारत बिना साझेदारी और गठबंधन के नहीं चल सकता है। उदाहरण के तौर पर अंतरराष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी (आईईए) के आंकड़ों के अनुसार, चीन का दबदबा सौर पैनलों और उनके घटकों के उत्पादन में है और सिर्फ इस देश से ही 75-80 प्रतिशत वैश्विक उत्पादन होता है जिनमें सौर सेल भी शामिल हैं। ऐसे समय में जब भारत का जोर अक्षय ऊर्जा पर बढ़ रहा है तब इसमें कोई हैरानी की बात नहीं है कि संयुक्त राष्ट्र व्यापार एवं विकास सम्मेलन की हालिया रिपोर्ट में कहा गया है कि भारत की चीन और यूरोपीय संघ यानी प्रत्येक पर व्यापार निर्भरता वर्ष 2023 में 1.2 प्रतिशत तक बढ़ी है। लेकिन इतना काफी नहीं है। ये आंकड़े और भी अधिक बढ़ने चाहिए, चाहे यह ताइवान, चीन या किसी अन्य देश के साथ व्यापार हो और चाहे वह ईवी, सौर पैनल, सेमीकॉन चिप या मोबाइल फोन के लिए ही क्यों न हो।

ऐपल को देश में सबसे ज्यादा रोजगार देने वाला तंत्र तैयार करने से पहले भारत में सुगम नियामकीय माहौल के लिए वर्षों इंतजार करना पड़ा। भारत को विनिर्माण एवं सेवा क्षेत्र दोनों में कई और रोजगार के मौके तैयार करने वालों की आवश्यकता है। इसके लिए सभी निवेशकों के लिए बिना किसी बाधा और आपत्ति के आमंत्रित करने की राह तैयार की जानी चाहिए।

आपका पक्ष

विश्व व्यापार संगठन की असफलता

लेख 'विश्व व्यापार संगठन का क्या होगा भविष्य' वर्तमान परिस्थितियों में विश्व व्यापार संगठन के कार्यक्षेत्र, विकसित देशों विशेषकर अमेरिका और चीन के प्रति झुकाव और विकासशील देशों के प्रति दुराग्रही रवैये को स्पष्ट करता है। आज अमेरिका, चीन और यूरोपीय देशों में संरक्षणवाद पनप रहा है और विस्तारवाद भी पैर पसारने लगा है। वैश्विक कारोबारी और राजनीतिक परिदृश्य अशांत है और इसके पीछे वे ही महाशक्तियां हैं जिनकी संयुक्त राष्ट्र और सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यता है और वर्चस्व है। सवाल यह है कि क्या हम संयुक्त राष्ट्र, विश्व व्यापार संगठन और यूएन के अन्य संगठनों से किसी समाधान की अपेक्षा कर सकते हैं? हाल में कोरोना काल के तीन वर्ष के दौरान करोड़ों लोग कोरोनावायरस से ग्रस्त हुए और लाखों लोगों की इलाज और दवाओं के अभाव में मृत्यु हो गई। बहुत सारे देशों की अर्थव्यवस्थाएं

टेक्नोलॉजी ही वैश्विक व्यापार और वैश्वीकरण की दिशा मोड़ रही है। ऐसे में विश्व व्यापार संगठन की कोई भूमिका नहीं रह गई है

चौपट हो गईं। अमेरिका, चीन और यूरोप के पास कोरोना के इलाज की दवाओं और वैक्सीन के पेटेंट थे और वहां की फार्मा कंपनियों ने कई अरब डॉलर का मुनाफा कमाया। लेकिन भारत, दक्षिण अफ्रीका, ब्राजील जैसे देशों ने विश्व व्यापार संगठन से अपने देशों में पेटेंट मुक्त दवाओं और वैक्सीन के उत्पादन का निवेदन किया जिससे अपने देशों और सभी देशों में कोरोना के इलाज की दवाओं और वैक्सीन की आपूर्ति की जा सके। विश्व व्यापार संगठन और विश्व स्वास्थ्य संगठन ने इसे लेकर कोई संवेदनशीलता नहीं दिखाई। लेख में जो निष्कर्ष निकाले गए हैं वह सही हैं। वैश्वीकरण की रफ्तार धीमी है और द्विपक्षीय समझौतों से ही विदेश व्यापार में स्थायित्व आ सकता है। टेक्नोलॉजी ही वैश्विक व्यापार और वैश्वीकरण की दिशा मोड़ रही है। ऐसे में विश्व व्यापार संगठन की कोई भूमिका नहीं रह गई है। जहां तक भारत में औद्योगीकरण के बारे में कहा गया है तो अभी शुरुआत है, 140 करोड़ की जनसंख्या भी वैश्विक व्यापार की दिशा बदलने में सक्षम है।

विनोद जौहरी, दिल्ली

विश्व स्वास्थ्य दिवस का औचित्य

विश्व में स्वास्थ्य सेवाओं, वैश्विक महामारियों से बचाव और स्वास्थ्य सुविधाओं में सुधार के लिए विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) की स्थापना 7 अप्रैल, 1948 को हुई थी। इसी दिन को विश्व स्वास्थ्य दिवस के रूप में भी मनाया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य लोगों को स्वास्थ्य के प्रति जागरूक करना है। कोविड-19 महामारी के प्रति डब्ल्यूएचओ की भूमिका निराशाजनक रही। बीते समय में डब्ल्यूएचओ क्यों नाकाम रहा, इसने क्या किया और क्या नहीं, इसकी चिंता को छोड़कर अब कोविड 19 से सारी दुनिया को सबक लेते हुए डब्ल्यूएचओ की कमियों और कमजोरियों को दूर करने के उपाय गंभीरता से करने चाहिए। विश्व स्वास्थ्य दिवस 2024 का थीम 'मेरा स्वास्थ्य, मेरा अधिकार' है। देश में डॉक्टरों के साथ सरकारी स्वास्थ्य केंद्रों और अस्पतालों की भी कमी है। डॉक्टरों की कमी को पूरा करने के लिए आयुर्वेदिक चिकित्सा को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

राजेश कुमार चौहान, जालंधर

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिज़नेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

भारतीय वायुसेना ने उन्नाव में आगरा-लखनऊ एक्सप्रेसवे पर रविवार को 'गगन शक्ति 2024' अभ्यास के तहत लड़ाकू विमान सुखोई के साथ कई विमानों की आपातकालीन लैंडिंग कराई।

माफी नामंजूर

सर्वोच्च न्यायालय ने भ्रामक विज्ञापन मामले में माफी नामंजूर करके जो संदेश देने की कोशिश की है, उसे व्यापक व सकारात्मक दृष्टि से देखने की जरूरत है। स्वामी रामदेव और पतंजलि आयुर्वेद के एमडी आचार्य बालकृष्ण की बिना शर्त माफी को स्वीकार करने से मना करने से ज्यादा महत्वपूर्ण है, जिम्मेदार सरकारी अधिकारियों के प्रति कोई नरमी न बरतना। बुधवार को सभी आरोपी माफी की मुद्रा में खड़े थे, पर अदालत ने माफी को पर्याप्त नहीं माना। गुमराह करने वाले कथित विज्ञापन प्रकाशित करने का जिक्र करते हुए अदालत ने कह दिया कि अवमानना मामले में कार्रवाई का सामना करने के लिए तैयार रहिए। अवमानना की कार्रवाई से बचने की हरसंभव कोशिश की गई थी, पर ऐसा लगता है कि शीर्ष अदालत ने इस मामले को वांछित गंभीरता से लिया है। अदालत का मानना है कि जान-बूझकर अदालत के निर्देश की अवहेलना की गई और हलफनामे पहले मीडिया को भेजे गए हैं, ताकि प्रचार से लाभ उठाया जा सके।

खैर, न्यायालय ने आगे की सुनवाई 16 अप्रैल को करने का फैसला किया है। शायद उस दिन कोई ठोस फैसला सामने आएगा। ध्यान रहे, अदालत ने दिव्य फार्मेसी के खिलाफ शिकायतों पर कार्रवाई में देरी करने के लिए उत्तराखंड राज्य लाइसेंसिंग प्राधिकरण के अधिकारियों की भी जमकर खिंचाई की है। न्यायमूर्ति हिमा कोहली और न्यायमूर्ति अहसानुद्दीन अमानुल्लाह की पीठ ने अधिकारियों को जिस लहजे में चेताया है, वह गौर करने लायक है। आम तौर पर यह देखा गया है कि दवा या खान-पान व्यवसाय से जुड़ी गड़बड़ियों के प्रति जिम्मेदार अधिकारियों का रवैया लगभग आपराधिक रहता है। लोगों के जीवन से खिलवाड़ होता है, लेकिन अधिकारियों की नींद नहीं टूटती। यह कोई नई बात नहीं है, आए दिन नकली या मिलावटी दवाएं पकड़ी जाती हैं, फिर भी अनेक कंपनियां इस स्याह कारोबार में अपने हाथ काले करने के लिए आती रहती हैं।

अब समय आ गया है, जब देश के लोगों को भ्रामक या गलत विज्ञापनों से बचाया जाए। यहां सवाल किसी एक कंपनी का नहीं, बल्कि पूरे बाजार का है।

ज्यादातर मामलों में अधिकारी तभी जागते हैं, जब लोग जान-माल से हाथ धोने लगते हैं। जब बहुत महंगी दवाओं का भी काला कारोबार हो सकता है, तब सामान्य दवाओं या खाने-पीने की चीजों में कितनी मिलावट होती होगी, सोचा जा सकता है। इसमें कोई दोराय नहीं कि ज्यादातर वस्तुओं की गुणवत्ता पर लोग शक करते हैं और समाज में इस पर खुलकर चर्चा होती है, पर जिम्मेदार अधिकारी तरह-तरह के बहानों में अपना मुंह छिपाए रहते हैं। ऐसे अधिकारियों पर अगर नकेल कसी जाए, तो अपराधी कारोबारियों पर भी लगाम लगेगी।

अब समय आ गया है, जब देश के लोगों को भ्रामक विज्ञापनों से बचाया जाए। सवाल किसी एक कंपनी का नहीं है, बल्कि पूरे बाजार का है, जहां एक से बढ़कर एक गलत विज्ञापनों की भरमार है। झूठे दावों की लंबी फेहरिस्त है, ऐसे दावों पर युद्ध स्तर पर प्रहार होना चाहिए। केवल उन्हीं अधिकारियों को नहीं, बल्कि दवा गुणवत्ता से जुड़े सभी अधिकारियों को सचेत हो जाना चाहिए। लोगों के स्वास्थ्य से खिलवाड़ कतई मंजूर नहीं। पूरे देश में यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि बीमारियों के इलाज का दावा करने वाला कोई भी विज्ञापन प्रकाशित नहीं किया जाएगा। भविष्य में कोई भी कंपनी दूसरी कंपनी के लिए अपमानजनक विज्ञापन जारी नहीं करे। एक महत्वपूर्ण बात यह भी कि कार्यपालिका के साथ ही विधायिका के भी किसी प्रतिनिधि को फर्जी दवा निर्माताओं के साथ खड़े होने से बचना चाहिए।

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले | 11 अप्रैल, 1949

शरणार्थी बच्चों की देख-रेख

नई दिल्ली, १० अप्रैल। पंडित जवाहरलाल नेहरूने आज यहां क्वीन्सवे में सहायता तथा पुनर्स्थापन सचिवालय के महिला विभाग की ओर से आयोजित महिला तथा बालक दिवस के अवसर पर भाषण करते हुए कहा कि 'निराश्रित महिलाओं तथा बालकों के रहने तथा खाने-पीने की व्यवस्था में चाहे जितनी भी कठिनाइयां आयें, हमें इस बात का खयाल रखना होगा कि इन पीढ़ियों की उपेक्षा न हो। मैं अनुभव करता हूं कि बालकों की देख-रेख पर पर्याप्त ध्यान देना चाहिये, क्योंकि बालक देश के धन हैं।' उन्होंने कहा, 'बालकों के बीच आने में मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई, लेकिन शरणार्थी बच्चों की कठिनाइयां पर बड़ी चिन्ता है। मैं अनुभव करता हूं कि अधिकारियों को आर्थिक तथा मकान के संबंध में कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है, फिर भी इनकी देख-रेख की ओर पर्याप्त ध्यान देना चाहिये।'

नेहरू जी के भाषण के पहले सहायता तथा पुनर्स्थापन सचिवालय के महिला विभाग की विभिन्न शाखाओं के प्रधानों ने रिपोर्ट पेश की। आनरेरी संयुक्त मंत्री श्रीमती जान मथाई ने महिला विभाग की आम रिपोर्ट पेश की जिसमें इस विभाग के नवम्बर १९४७ में कायम होने से लेकर अब तक की कार्यवाइयों की चर्चा की गई है। विभिन्न शिक्षण केन्द्रों में लगभग ११०० महिलाओं को काम सिखाया जा रहा है और लगभग २५०० महिलाएं मजूरी कर रही हैं। महिला विभाग द्वारा दिल्ली के विभिन्न मुहल्लों में ८ प्राइमरी स्कूल खोले गये हैं। इन स्कूलों में लगभग ३००० बच्चे पढ़ते हैं। भारतीय संघ में १०,००६ मुस्लिम महिलाएं और बच्चे पाये गये, जो भगा लिये गये थे और पाकिस्तान में वैसी ५६८३ महिलाएं और बच्चे पाये गये थे। महिला विभाग की शाखा ने लगभग ५०० महिलाओं को काम पर लगाया, जबकि लगभग २००० महिलाओं ने अपने नाम नौकरी प्राप्त करने के लिए दर्ज कराये हैं।

भारत फौजी संधि के विरुद्ध- नई दिल्ली, १० अप्रैल। आज यहां कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक में इस विचार का समर्थन किया गया बताया जाता है कि लन्दन में होने वाले राष्ट्र-मण्डल प्रधानमन्त्री सम्मेलन में भारत की घोषित नीति, कि भारत सार्वभौम स्वतन्त्र जनतन्त्र रहेगा, के बारे में कोई समझौता नहीं होगा।

बंगाल में नाक और साख का सवाल

लोकसभा सीटों के लिहाज से तीसरे सबसे बड़े राज्य में दोनों बड़े दावेदारों यानी तृणमूल व भाजपा पर अपनी पुरानी सीटों को बचाने और उनकी तादाद बढ़ाने की गंभीर चुनौती है।

यहां स्कैन करें

प्रभाकर मणि तिवारी | वरिष्ठ पत्रकार

लोकसभा चुनाव में पश्चिम बंगाल की 42 सीटें राज्य में सत्तारूढ़ तृणमूल कांग्रेस और सबसे बड़ी विपक्षी पार्टी भाजपा के लिए नाक और साख का सवाल बन गई हैं। इन सीटों के लिए सात चरणों में मतदान होना है। इंडिया गठबंधन के सहयोगी दलों यानी कांग्रेस और वाम मोर्चा के साथ सीटों पर तालमेल के बजाय तृणमूल कांग्रेस राज्य की तमाम सीटों पर अकेले ही लड़ रही है। कांग्रेस और वाम मोर्चा ने सीटों पर समझौता किया है। दूसरी ओर, भाजपा भी तमाम सीटों पर चुनाव लड़ रही है।

इन दोनों दावेदारों, यानी तृणमूल कांग्रेस और भाजपा पर इस बार अपनी पुरानी सीटों को बचाने और उनकी तादाद बढ़ाने की गंभीर चुनौती है। यही वजह है कि दोनों पार्टियों के शीर्ष नेताओं ने बेहद आक्रामक चुनाव अभियान शुरू किया है। बीते लोकसभा चुनाव में तृणमूल कांग्रेस को 22 और भाजपा को 18 सीटें मिली थीं। दो सीटें कांग्रेस के खाते में गई थीं, जबकि लेफ्ट या वाम मोर्चा का खाता भी नहीं खुला था।

यूं तो सीटों के लिहाज से तीसरा बड़ा राज्य होने के कारण बंगाल तमाम दलों के लिए हमेशा अहम रहा है, पर इस बार दोनों प्रमुख दलों के बीच कांटे की लड़ाई के कारण इसकी अहमियत ज्यादा ही बढ़ गई है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी पहले चरण के मतदान के पहले ही आधा दर्जन चुनावी रैलियों को संबोधित कर चुके हैं। दूसरी ओर, मुख्यमंत्री ममता बनर्जी भी पीछे नहीं हैं। भाजपा ने राज्य में कम से कम 35 सीटें जीतने का लक्ष्य रखा है। दूसरी ओर, तृणमूल ने भी ज्यादा से ज्यादा सीटें जीतने के प्रयास में 26 नए चेहरों को मैदान में उतारा है।

विश्लेषकों का कहना है कि भाजपा को नागरिकता (संशोधन) कानून और संदेशखाली कांड का फायदा मिल सकता है। वह नागरिकता कानून के जरिये राज्य की एक करोड़ से ऊपर की मतुआ आबादी को अपने पाले में खींचने का प्रयास कर रही है। इसी तरह, संदेशखाली कार्ड के जरिये पार्टी के तमाम नेता राज्य में महिलाओं की स्थिति का प्रचार कर रहे हैं। राज्य में कम से कम पांच सीटों पर मतुआ वोटर निर्णायक हैं। इनमें महुआ मोइत्रा की कृष्णनगर सीट भी है, पर ममता बनर्जी और उनकी पार्टी लगातार प्रचार कर रही है कि सीएए के तहत आवेदन करते ही नागरिकता छिन जाएगी। ममता इस कानून को एनआरसी से भी जोड़ दे रही हैं। ऐसे में, फिलहाल इस कानून का चुनावी फायदा या नुकसान किसे होगा, बताना मुश्किल है। भाजपा के लिए शिक्षक भर्ती और राशन घोटाला भी एक प्रमुख मुद्दा है।

ममता बनर्जी समेत तृणमूल कांग्रेस के तमाम नेता केंद्रीय एजेंसियों के राजनीतिक इस्तेमाल का आरोप लगा रहे हैं। साथ ही, केंद्रीय योजनाओं के मद में कोई पैसा नहीं देने का आरोप भी उठ रहा है। ममता और पार्टी के नेता राज्य सरकार की ओर से शुरू की गई लक्ष्मी भंडार, कन्याश्री, सबुज साथी और युवाश्री के अलावा विधवा और बुजुर्ग पेंशन जैसी योजनाओं का जमकर प्रचार कर रहे हैं। राज्य के 7.18 करोड़ वोटरों में 3.59 करोड़ महिलाएं शामिल हैं। साल 2021 के विधानसभा चुनाव में इन योजनाओं ने महिलाओं का करीब 55 प्रतिशत वोट तृणमूल को दिलाया था। उसके बाद लक्ष्मी भंडार योजना शुरू की गई है। केंद्रीय योजनाओं की काट के तौर पर राज्य सरकार व तृणमूल कांग्रेस अपने मजबूत तंत्र के जरिये अपनी योजनाओं का तृणमूल स्तर तक प्रचार करने में कामयाब रही है। हालांकि, इन योजनाओं के तहत मिलने वाले लाभ में भ्रष्टाचार के आरोप लगते रहे हैं, लेकिन पार्टी के नेता दावा करते हैं कि इसका कोई असर नहीं होगा।

उत्तर 24-परगना जिले में विभिन्न घोटालों में पार्टी के मजबूत नेताओं की गिरफ्तारी ने भी तृणमूल कांग्रेस की चिंता बढ़ा दी है। वहां संगठन संभालने वाले मंत्री ज्योतिप्रिय मल्लिक राशन घोटाले में जेल में हैं, तो कोलकाता और हुगली जिले में चुनावी जिम्मा संभालने वाले पार्थ चटर्जी भी शिक्षक भर्ती घोटाले में हवालात में हैं। संदेशखाली की घटना और उस मामले में शाहजहां शेख समेत पार्टी के कई नेताओं की गिरफ्तारी भी उसके लिए सिरदर्द बन गई है। संदेशखाली इलाका बशीरहाट लोकसभा क्षेत्र के तहत है। पार्टी ने इस सीट से पिछली बार जीतने वाली अभिनेत्री नुसरत जहां को टिकट नहीं दिया है। संदेशखाली कांड के दौरान उनकी काफी किरकिरी हुई थी। इसी तरह बीरभूम और आसपास के जिलों में पार्टी के चुनाव अभियान की जिम्मेदारी उठाने वाले बाहुबली नेता अणुब्रत मंडल भी पशु तस्करी मामले में दिल्ली की तिहाड़ जेल में हैं। पिछले चुनाव में पार्टी का मजबूत स्तंभ रहे पार्थ चटर्जी जेल में हैं, तो शुभेंदु अधिकारी भाजपा में।

तृणमूल कांग्रेस नागरिकता कानून का डर दिखाकर अल्पसंख्यक वोटरों को एकजुट करने के प्रयास कर रही है। मोटे अनुमान के मुताबिक, राज्य में इस तबके की आबादी 30 प्रतिशत से ज्यादा है। पार्टी भाजपा के राम मंदिर और नागरिकता कानून के मुद्दे को अपने सियासी हित में इस्तेमाल करते हुए इस तबके में बिखराव रोककर एकजुट करने का प्रयास कर रही है। पिछले चुनाव में अल्पसंख्यक वोटों के विभाजन के कारण ही भाजपा को उत्तर दिनाजपुर और मालदा जिलों की एक-एक सीट पर जीत मिली थी। तृणमूल कांग्रेस का लक्ष्य अबकी बार इस बिखराव को रोकना है।

दक्षिण बंगाल के पांच जिलों में फैले गंगा के मैदानी इलाकों में लोकसभा की 16 सीटें हैं। भाजपा ने पिछली बार इनमें से महज तीन सीटें जीती थीं। इन इलाकों में तृणमूल ने छह नए चेहरों को मैदान में उतारा है।

भाजपा उत्तर बंगाल में मजबूत समझी जाती है। पिछली बार उसने इलाके की आठ में से सात सीटें जीत ली थीं, पर इस बार उसे वहां अंतरकलह से जूझना पड़ रहा है। उसकी सबसे बड़ी चिंता दक्षिण बंगाल में पार्टी का संगठन कमजोर होना है। विपक्ष के नेता शुभेंदु अधिकारी के अलावा उसके पास कोई बड़ा चेहरा नहीं है। जंगलमहल इलाके में लोकसभा की आठ सीटें हैं। पिछली बार इनमें से भाजपा को पांच और तृणमूल को तीन सीटें मिली थीं, पर तब मेदिनीपुर इलाके के धाकड़ नेता शुभेंदु अधिकारी तृणमूल में थे। उनके 2019 में भाजपा में जाने के बाद सियासी समीकरण बदला है।

कांग्रेस और लेफ्ट फ्रंट ने तृणमूल पर भाजपा से तालमेल का आरोप लगाते हुए अपना चुनाव अभियान शुरू किया है। दिलचस्प बात यह है कि ममता बनर्जी भी इंडिया ब्लॉक के इन दोनों सहयोगी दलों के खिलाफ यही यानी भाजपा से गोपनीय तालमेल के आरोप लगा रही हैं। तय है, भाजपा और तृणमूल के बीच कांटे की टक्कर में गंगा के मैदानी इलाकों के साथ ही जंगलमहल इलाका, उत्तर बंगाल और दक्षिण बंगाल का मतुआ बहुल इलाका अहम भूमिका निभाएगा।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मुक्त-बाजार व्यवस्था की एक नायाब मिसाल आईपीएल

यहां स्कैन करें

मदन सबनवीस | वरिष्ठ अर्थशास्त्री

इंडियन प्रीमियर लीग यानी आईपीएल के सितारों की नीलामी के दौरान उस वक्त सभी आश्चर्य में पड़ गए, जब मिशेल स्टार्क को एक फ्रेंचाइजी ने 24.5 करोड़ रुपये में खरीदा, जो किसी भी क्रिकेटर की सबसे अधिक बोली थी। क्या यह चौंकाने वाली खबर थी? हां! पर क्या इसमें कुछ गलत था? नहीं, क्योंकि यह बाजार ही है, जो खिलाड़ी की कीमत तय करता है। आईपीएल एडम स्मिथ के मुक्त-बाजार के सिद्धांत का ही प्रतीक है।

यह क्रिकेट टूर्नामेंट इस बात को समझने का एक बेहतर उदाहरण है कि कॉरपोरेट सेक्टर किस तरह से काम करता है। जिस तरह शेयरधारक होते हैं, जो कंपनी में विश्वास रखते हैं, उसी तरह आम लोग होते हैं, जो स्टेडियम में पहुंचते हैं या टीवी आदि पर मैच देखते हैं। उनकी टीमें नहीं होतीं, लेकिन इस टूर्नामेंट के आयोजन में उनकी उपस्थिति अनिवार्य है। प्रायोजक भी इसीलिए विज्ञापन देने को उत्सुक रहते हैं, क्योंकि आईपीएल के पास प्रतिबद्ध घरेलू दर्शक हैं। क्रिकेट खिलाड़ी इस पूंजीवादी दुनिया के कर्मचारियों की तरह हैं। करीब दो महीने तक वे लगातार खेलते हैं और खूब थक जाते हैं, जैसे कर्मचारी काम से थकते हैं। कभी-कभी उनको चोट भी लग जाती है। मगर सभी को काफी अच्छा भुगतान किया जाता है, जो उनको खेलने के लिए प्रेरित करता रहता है। कॉरपोरेट दुनिया में भी ठीक इसी तरह से होता है, जहां कर्मचारियों से अंतहीन काम कराया जाता है और फिर उनको बोनस या शेयर के रूप में मुआवजा दिया जाता है। बड़े अधिकारियों को कई जगह यात्राएं करनी पड़ती हैं, जहां उन्हें अच्छे होटलों में ठहराया जाता है। क्रिकेटर भी एक से दूसरे शहर की यात्रा करते रहते हैं।

आईपीएल टूर्नामेंट इस बात को समझने का एक बेहतर उदाहरण है कि कॉरपोरेट सेक्टर किस तरह से काम करता है।

कभी-कभी किसी टीम के खिलाड़ी के लिए बोली लगाना आईपीओ (आरंभिक सार्वजनिक पेशकश) के समान हो सकता है। किसी टीम में एक नया खिलाड़ी लाने के लिए फ्रेंचाइजी एक बड़ी राशि (न्यूनतम बोली से अधिक मूल्य चुकाकर) चुकाती है, लेकिन क्रिकेटर लिस्टिंग के समय नुकसान (मैच में कमजोर प्रदर्शन से) करा सकता है। इसी तरह, खिलाड़ियों का एक से दूसरी टीम में जाना कर्मचारियों के पलायन की तरह ही है, क्योंकि बेहतर शर्तों के कारण खिलाड़ी कर्मचारियों की तरह दूसरी टीमों का हिस्सा बनते रहते हैं। हां, कभी-कभी टीम भी उनको बाहर का रास्ता दिखा देती है। मुक्त बाजार अर्थव्यवस्था में विदेशी निवेशक भी उपभोक्ताओं तक अपने उत्पाद पहुंचाते हैं, आईपीएल में भी विदेशी खिलाड़ी टीम का हिस्सा बनते हैं। जिस तरह से विश्लेषक और अर्थशास्त्री इस बात पर जोर देते हैं कि किसी को बाजार और अर्थव्यवस्था को किस तरह देखना चाहिए, उसी तरह से आईपीएल में भी ऐसे विशेषज्ञ होते हैं, जो फेंकी गई हरेक गेंद का विश्लेषण करते हैं। अखबारों में भी तमाम विवरणों व विश्लेषणों के साथ आईपीएल की खबरें छापी जाती हैं। ये ठीक उसी तरह के होते हैं, जिस तरह हम जीडीपी विकास या महंगाई पर विचार छपे देखते हैं।

मुक्त बाजार विज्ञापन को भी जन्म देता है, जो कभी-कभी अपने चरम पर जा सकता है। जब तक व्यापक नियमों का पालन किया जाता है (जैसे-तंबाकू या शराब का खुला विज्ञापन नहीं) दोहरे मानकों वाली इस दुनिया में सब कुछ स्वीकार्य है। बेशक, हमारे यहां भारतीय रिजर्व बैंक और भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड यह सुनिश्चित करने की पूरी कोशिश कर रहे हैं कि खुदरा निवेशकों को गलत जानकारियां न मिलें, लेकिन जब आप इस सीमा को पार कर जाते हैं, तो कोई नियम आड़े नहीं आता। यही कारण है कि तंबाकू संबंधित माउथ फ्रेशनर का विज्ञापन करते एक पूर्व क्रिकेटर दिख जाते हैं और दो महान पूर्व भारतीय क्रिकेटरों के साथ-साथ एक वेस्ट इंडीज खिलाड़ी भी उसका समर्थन करने लगते हैं।

हमने यहां गेमिंग एप का उदय भी देखा है। कानून की नजर में यह जुआ नहीं, बल्कि एक खेल है, इसीलिए आईपीएल टीमों के कप्तान हर कुछ ओवरों के बाद टीवी स्क्रीन पर दर्शकों को ऐसी किसी गेमिंग में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। इसका प्रभाव भी पड़ा है और लाखों लोग ऐसे एप से जुड़े हुए हैं। स्पष्ट है, आईपीएल पूंजीवाद का सबसे अच्छा उदाहरण है। बाजार ही यहां सब कुछ तय कर रहा है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

इस्लाम, ईमान और एहसान

सूफी धर्म के तीन स्तंभ हैं- इस्लाम, ईमान और एहसान। इस्लाम का अर्थ है- समर्पण। अपने अहंकार का समर्पण, अपने अतीत का समर्पण, अपनी तथाकथित आत्मा का समर्पण। 'इस्लाम' शब्द के कई अर्थ और भी हैं, लेकिन बुनियादी अर्थ समर्पण ही है। इसका दूसरा अर्थ है शांति। जब कोई समर्पण करता है, तो वहां शांति छा जाती है, क्योंकि जब तुम समर्पण करते हो, तो सारे संघर्ष मिट जाते हैं। जब तुम किसी सद्गुरु, धर्म के किसी स्कूल अथवा किसी विशिष्ट नक्शे के प्रति समर्पित हो जाते हो, तब तुम बहुत अधिक शांति का अनुभव करते हो। अब तुम संघर्ष नहीं कर रहे। तुमने किसी ऐसे व्यक्ति को खोज लिया है, जिस पर तुम आस्था कर सकते हो। तुमने किसी ऐसे व्यक्ति को पा लिया है, जो रास्ता जानता है। तुम उसका अनुसरण कर सकते हो। महान श्रद्धा से शांति का जन्म होता है।

इसका तीसरा अर्थ है खामोशी या मौन। शांति का अर्थ है कि वहां जीवन में कोई संघर्ष नहीं रह गया, अब 'यह रास्ता' अथवा 'वह रास्ता' भी चुनना बाकी न रहा। मुझे इस रास्ते से जाना चाहिए अथवा उस रास्ते से? मुझे यह काम करना चाहिए अथवा वह? एक बार तुमने सद्गुरु को चुन लिया, तो शांति उदित होती है, क्योंकि अब वहां बताने के लिए वह मौजूद है कि क्या करना है और क्या नहीं करना है। तुम सोचने वाले मन को उठाकर जब एक किनारे रख सकते हो, तब शांति आती है और मौन छा जाता है। मौन, शांति का ही दूसरा आयाम है।

क्या तुमने कभी निरीक्षण किया है, जब तुम प्रेम में किसी व्यक्ति को समर्पण कर देते हो, तो अचानक तुम्हारे अंदर वहां एक गहन मौन छा जाता है। तब एक भी विचार गतिशील नहीं होता, कोई भी विचार तरंग उठती ही नहीं। वहां बाहर बहुत अधिक शोर हो सकता है। सड़क पर वाहनों के आने-जाने का, हवाई जहाज या रेलों का, लेकिन जब तुम मौन में होते हो, तो यातायात का शोर भी तुम्हारी एकाग्रता को भंग नहीं करता। तुम उनके रहते हुए भी मौन को पा लोगे। जब तुम शांत होते हो, तो तुम मौन हर जगह पा लोगे।

जब तुम सद्गुरु को समर्पण करते हो, तो किसी ऐसे व्यक्ति को समर्पण करते हो, जो तुमसे बहुत दूर है, फिर भी तुम्हारे निकट है। सद्गुरु एक सीढ़ी होता है। इस सीढ़ी का पहला डंडा बहुत निकट होता है और सबसे आखिरी डंडा आसमान की ऊंचाइयों में बादलों से कानाफूसी करता हुआ अत्यधिक दूर होता है। जब तुम उसे समर्पण करते हो, तो सीढ़ी का एक छोर तुम्हारे हाथों में होता है और दूसरा छोर परमात्मा के साथ होता है। सद्गुरु तुम्हारी तरह दिखाई देता है, फिर भी वह तुम्हारे जैसा नहीं होता। वह पहुंच गया है। उसने पा लिया है। वह पूर्ण तृप्त और संतुष्ट है। इसलिए समर्पण बिना सद्गति नहीं!

इस्लाम का अर्थ है- समर्पण। अपने अहंकार का समर्पण, अपने अतीत का समर्पण, अपनी तथाकथित आत्मा का समर्पण। इस्लाम शब्द के कई अर्थ और भी हैं, पर बुनियादी अर्थ समर्पण ही है।

ओशो

द्रौपदी मुर्मु | राष्ट्रपति, भारत

इक्कीसवीं सदी में अनुसंधान का महत्व निरंतर बढ़ रहा है। होमियोपैथी चिकित्सा पद्धति की स्वीकार्यता और लोकप्रियता बढ़ाने में शोध व दक्षता की महत्वपूर्ण भूमिका रहेगी। विद्यार्थियों में इसके प्रति आकर्षण बढ़ेगा।

अनुलोम-विलोम
बुजुर्गों की चिंता

सरकारें बुजुर्गों की भी चिंता करें

युवाओं के देश में बुजुर्गों की बढ़ती आबादी की तरफ भी सरकारों को ध्यान देना चाहिए। यह चिंता समाज और सरकार, दोनों को करनी होगी कि वरिष्ठ नागरिकों को भी सम्मानजनक जीवन जीने का अधिकार मिले। असल में, दिक्कत यह है कि भारत में संयुक्त परिवार की प्रथा करीब-करीब समाप्त हो चली है। घर के बड़े-बुजुर्ग कहीं और रहते हैं, तो उनकी संतानें कहीं और। इस तरह वे अकेले पड़ जाते हैं। फिर, उनके लिए ढलती उम्र में सेहत भी एक बड़ी समस्या बन जाती है। अगर बुजुर्ग दंपति एक साथ रहते हैं, तो कुछ हद तक एक-दूसरे का संबल बने रहते हैं, लेकिन अगर किसी एक की मृत्यु हो जाती है, तो फिर दूसरे के लिए समस्या बढ़ जाती है। अगर उनको पेंशन आदि की सुविधा नहीं है, तो बेटे-बहू पर उनका आश्रित रहना विपरीत परिस्थितियों का निर्माण करता है। मैं यह नहीं कहता कि सभी संतानें अपने माता-पिता की अवहेलना करती हैं, लेकिन अधिकतर घरों में बुजुर्गों के प्रति तिरस्कार का भाव ही दिखता है।

ऐसे में, पिछले दिनों नीति आयोग ने भारत में बुजुर्गों की समुचित देखभाल के लिए कर और कानूनी सुधार, आवास क्षेत्र में सुधार और एक मजबूत पेंशन व बीमा प्रणाली का जो आह्वान किया है, उसका स्वागत किया जाना चाहिए। आयोग ने कहा है कि भारत में बुजुर्गों की देखभाल के लिए आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, यानी एआई पर ध्यान देना बहुत जरूरी है। नीति आयोग ने 'भारत में वरिष्ठ नागरिकों की देखभाल में सुधार : वरिष्ठ नागरिकों देखभाल प्रतिमान की पुनर्कल्पना' शीर्षक से एक स्थिति-पत्र जारी किया है, जिसमें कई उपायों की चर्चा की गई है। यह साल 2047 तक विकसित भारत के लक्ष्य को पाने के लिए केंद्र सरकार द्वारा उठाया गया एक प्रतिबद्ध कदम है।

वाकई, अपने बुजुर्गों की देखभाल हमें करनी ही चाहिए और इसके लिए व्यापक स्तर पर तकनीक को प्राथमिकता देना हम सभी के लिए बहुत जरूरी है। अब समय आ गया है कि चिकित्सा और सामाजिक आयामों के अलावा वरिष्ठ नागरिकों की देखभाल के विशेष पक्षों के बारे में भी हमें सोचना चाहिए। यह वह समय है, जब उम्र बढ़ने को गरिमा से प्रेरित, सुरक्षित और उत्पादक बनाने पर गंभीर चर्चा होनी चाहिए। हरेक परिवार के नौजवानों का यह दायित्व बनता है कि वे बुजुर्गों की सुरक्षा सुनिश्चित करें और उनकी भलाई पर अधिक ध्यान दें। अगर वे ऐसा करेंगे, तो उनको देखकर उनकी संतानें भी उनके बुढ़ापे में सेवा के लिए एक सशक्त स्तंभ बनकर खड़ी रहेंगी। यही भारतीय संस्कार भी है।

युगल किशोर राही, टिप्पणीकार

हमेशा विशेष माने गए वरिष्ठ लोग

यह सही है कि एकाकी जीवन बुजुर्गों को तोड़ देता है, जिससे वे हताश होने लगते हैं और उनमें निराशा बढ़ने लगती है। मगर भारत सामाजिक बंधनों में जकड़ा ऐसा देश है, जिसके मजबूत बंधन में बुजुर्ग व बच्चे, दोनों अहम हैं। यहां बच्चों को जितना प्यार मिलता है, बुजुर्गों को भी उतना ही सम्मान मिलता है। बुजुर्गों का तिरस्कार एक पश्चिमी सोच है, क्योंकि विकसित देशों में ही स्वावलंबन के नाम पर संतानें अपने मां-बाप से अलग हो जाती हैं। वहां माता-पिता भी इस बात में फख्र महसूस करते हैं और बच्चे को अपने पांव पर खड़ा होने के लिए उसे खुद से दूर भेजना पसंद करते हैं। मगर भारत में ऐसा नहीं होता। यहां मां-बाप यही चाहते हैं कि बच्चे जितने अधिक समय तक पास में रहें, वही बेहतर। वे उनको अकेले छोड़ते भी हैं, तो मजबूरीवश या फिर उनकी पढ़ाई या नौकरी लग जाने पर। ऐसे में, बच्चे अपने मां-बाप से लगाव रखते हैं, जो उनके बुजुर्ग होने तक बना रहता है।

फिर भी, सरकारें बुजुर्गों के हित में अनवरत कार्यक्रम चलाती रहती हैं। पिछले साल के अगस्त में ही उत्तर प्रदेश की योगी सरकार ने प्रदेश के तमाम बुजुर्गों की स्वास्थ्य-चिंता का ख्याल रखते हुए उनके निःशुल्क इलाज की व्यवस्था शुरू की। माना जाता है कि इससे तकरीबन 12 लाख परिवारों को फायदा हो रहा है। इस तरह की योजना देश भर की सरकारें चलाती रहती हैं। इसी तरह, वृद्धावस्था पेंशन जैसी योजनाएं भी काफी पहले से हमारे देश में चल रही हैं, जिनके तहत बुजुर्गों को सम्मानजनक जीवन जीने के लिए कुछ-न-कुछ आर्थिक सहायता दी जाती है। यह ठीक है कि नीति आयोग ने एआई जैसी नई तकनीकों की वकालत की है, लेकिन देखा जाए, तो कई योजनाओं में एआई का इस्तेमाल बढ़ा है और जैसे-जैसे नई तकनीक पर हमारा भरोसा बढ़ता जाएगा, यकीनन सरकारी योजनाओं में उनका इस्तेमाल भी बढ़ता जाएगा।

कहने का मतलब यह है कि भारत में बुजुर्गों का ध्यान घर-परिवार के लोग भी रखते हैं और सरकारें भी रखती हैं। बेशक, कुछ परिवार अपवाद हैं और उनके घर के बुजुर्ग वृद्धाश्रम में देखे जाते हैं, लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि भारत अब बुजुर्गों को सम्मान देने वाला देश नहीं रहा, ऐसी धारणा बना ली जाए। इन सबका कोई अर्थ नहीं है। विशेषकर ग्रामीण भारत आज भी संस्कारों में जीता है और हमारे संस्कार बुजुर्गों की अवहेलना की अनुमति नहीं देते। यही कारण है कि पश्चिमी देशों की तुलना में भारत में सामाजिक और पारिवारिक ढांचा कहीं अधिक मजबूत माना जाता है।

देवशंकर चौधरी, टिप्पणीकार

कल्पमेधा

वे लोग जो थोड़ी-सी अल्पकालिक सुरक्षा प्राप्त करने के लिए अत्यावश्यक आजादी का त्याग करते हैं, वे न तो आजादी के और न ही सुरक्षा के लायक होते हैं।

– बेंजामिन फ्रैंकलिन

हकीकत पर पर्दा

अगर अदालत किसी आपराधिक मामले की जांच केंद्रीय एजंसी को सौंप दे तो उससे यही संदेश जाता है कि उस मामले को सुलझाने में राज्य सरकार नाकाम रही या उस पर भरोसा नहीं रह गया है। पश्चिम बंगाल के संदेशखाली में महिलाओं के उत्पीड़न और जमीन कब्जा करने के मामले में वहां के उच्च न्यायालय ने केंद्रीय जांच ब्यूरो से जांच कराने का आदेश दिया है। इससे राज्य सरकार पर कमजोर हुए भरोसे का संदेश जाता है। हालांकि सत्तारूढ़ तृणमूल कांग्रेस इस मामले को भाजपा की रची साजिश बता रही है। इस वर्ष जनवरी से ही संदेशखाली विवादों में घिरा हुआ है। राशन घोटाला मामले में जांच के लिए प्रवर्तन निदेशालय का दल तृणमूल कांग्रेस नेता शाहजहां शेख के घर पहुंचा तो उस पर पथराव किया गया, जिसमें कई कर्मचारी घायल हो गए। उसके बाद वहां की महिलाओं ने आरोप लगाया कि शाहजहां शेख के लोग महिलाओं को घर से उठा कर ले जाते और उनका यौन शोषण करते हैं। उन्होंने कई भूखंडों पर जबरन कब्जा कर लिया है। इसे लेकर महिलाएं पिछले करीब दो महीने से आंदोलन कर रही हैं। हालांकि राज्य सरकार ने मामले की जांच कराई, पर उसमें कोई भी आरोप साबित नहीं हो पाया। उसके बाद वहां भाजपा और तृणमूल कांग्रेस के बीच सियासी आरोप-प्रत्यारोप चल रहे हैं।

कोलकाता उच्च न्यायालय ने इस मामले का स्वतः संज्ञान लिया था। पहले उसने राज्य सरकार से स्थिति रपट मांगी, पर उसमें तमाम आरोपों का सिरे से खंडन ही किया गया था। राज्य महिला आयोग और पुलिस की महिला शाखा की रपटें राज्य सरकार की दलीलों को सही ठहरा रही हैं, मगर राष्ट्रीय महिला आयोग इसके उलट तस्वीर पेश कर रहा है। स्वाभाविक ही, अदालत ने मामले की जांच सीबीआइ से कराना उचित समझा है। अब संदेशखाली को लेकर राजनीतिक रस्साकशी कुछ अधिक बढ़ गई है। इसे लेकर भाजपा जहां ममता सरकार पर निशाना साध रही है, वहीं ममता बनर्जी का कहना है कि संदेशखाली आरएसएस का गढ़ बन चुका है और वही ऐसे बेबुनियाद विवाद पैदा कर रहा है। जाहिर है, इस आरोप-प्रत्यारोप के बीच हकीकत सामने नहीं आ पा रही। शाहजहां शेख पर गंभीर आरोप हैं और उसे केवल एकतरफा दलीलों के आधार पर बेगुनाह करार नहीं दिया जा सकता।

पश्चिम बंगाल पर सदा से राजनीतिक वर्चस्व के लिए खूनी संघर्ष और सत्ता के दुरुपयोग का आरोप लगता रहा है। पहले वाम मोर्चा के कार्यकर्ताओं पर आरोप लगते थे कि वे सरकारी संरक्षण में जमीनों पर कब्जा करते, ठेके उठाते, अनियमितताएं करते और विरोधी दलों के कार्यकर्ताओं के खिलाफ हिंसा करते हैं। उन्हीं प्रवृत्तियों के प्रतिकार में लोगों ने तृणमूल कांग्रेस के हाथ में सत्ता सौंपी थी। मगर अब यह छिपी बात नहीं है कि तृणमूल के कार्यकर्ता और नेता भी उसी राह पर चल पड़े हैं, जिस पर पहले वाम मोर्चा के कार्यकर्ता चला करते थे। ऐसी अनेक घटनाएं सामने आ चुकी हैं, जिनमें तृणमूल कार्यकर्ताओं और नेताओं पर दबंगई के आरोप हैं। हालांकि भाजपा जिस तरीके से अपना राजनीतिक प्रभाव जमाना चाहती है, वह भी आरोपों से मुक्त नहीं है। मगर चूंकि कानून-व्यवस्था की जिम्मेदारी राज्य सरकार पर है, इसलिए उससे पारदर्शिता और निष्पक्षता की उम्मीद अधिक की जाती है। संदेशखाली को लेकर छिड़े विवादों को अगर राज्य सरकार ने निष्पक्ष होकर निपटा लिया होता, तो अदालत को सीबीआइ जांच का आदेश देना ही न पड़ता।

बढ़ती साख

यह शिकायत अक्सर दुहराई जाती है कि हमारे देश के शैक्षणिक संस्थान दुनिया के उत्कृष्ट संस्थानों के बीच जगह बनाने में सफल नहीं हो पाते। मगर इस बार के क्यूएस विश्व सांस्थानिक मूल्यांकन और श्रेणीकरण में वह शिकायत काफी हद तक दूर हो गई है। पढ़ाई-लिखाई के मामले में दुनिया के उत्कृष्ट संस्थानों में जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय यानी जेएनयू को बीसवें स्थान पर रखा गया है। उसके बाद भारतीय प्रबंधन संस्थान की अहमदाबाद, कोलकाता और बंगलुरु शाखाओं को क्रमशः पच्चीसवां और पचासवां स्थान मिला है। जेएनयू का दुनिया के बीस बेहतरीन संस्थानों में शुमार होना इसलिए भी संतोष और सम्मान की बात है कि यह संस्थान पिछले कुछ वर्षों से लगातार दूसरी वजहों से ज्यादा चर्चा में बना रहा है। वह विद्यार्थी संगठनों के बीच हिंसक टकराव, प्रशासन की ज्यादतियों, संकीर्ण नजरिए, भेदभावपूर्ण व्यवहार के आरोपों आदि के चलते अधिक सुर्खियां बटोरता रहा है। इतना कुछ होने के बावजूद वहां पढ़ाई-लिखाई का स्तर ऊंचा बना हुआ है, यह उल्लेखनीय बात है।

किसी भी शैक्षणिक संस्थान की प्रतिष्ठा इस बात से बनती है कि वह अपने विद्यार्थियों को कितने स्वतंत्र और तार्किक ढंग से सोचने, प्रतिक्रिया देने और नवोन्मेष के अवसर उपलब्ध कराता है। जेएनयू की स्थापना ही शोध और अनुसंधान को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से की गई थी। उसके पाठ्यक्रम और पढ़ाई-लिखाई, परीक्षण आदि का तरीका इस तरह बनाया गया कि जिससे विद्यार्थियों में तार्किक क्षमता और अनुसंधान की प्रवृत्ति विकसित हो सके। इस मामले में उसका प्रदर्शन निराश करने वाला कभी नहीं देखा गया। हालांकि पिछले कुछ वर्षों में जिस तरह शैक्षणिक संस्थानों पर राजनीतिक वर्चस्व की कोशिशें बढ़ी हैं, उसमें अनेक संस्थानों की पढ़ाई-लिखाई के माहौल पर बुरा असर पड़ा है। जेएनयू पर भी इसकी छाया स्पष्ट देखी जा रही थी। मगर वहां के विद्यार्थियों और अकादेमिक लोगों ने तमाम उथल-पुथल के बीच भी विश्वविद्यालय के असल उद्देश्य को धूमिल नहीं होने दिया है, तो निस्संदेह इससे उसकी साख और बढ़ी है।

अस्थिर म्यांमा और भारत की मुश्किलें

भारत, लोकतांत्रिक सरकार न होने के बाद भी म्यांमा की सेना से संबंध बनाए रखते हुए पूर्वोत्तर के राज्यों में शांति स्थापना के प्रयासों में सफल हो रहा था। मगर अब स्थितियां भारत के अनुकूल नहीं दिख रही हैं।

ब्रह्मदीप अलूने

म्यांमा में लोकतांत्रिक शक्तियों और सेना के बीच सत्ता संघर्ष की दशकों पुरानी जटिल स्थितियों में भी भारत ने बेहद संतुलित नीति अपनाई, लेकिन पिछले तीन वर्षों में म्यांमा की राजनीतिक स्थितियां बेकाबू हो गई हैं। लोकतांत्रिक नेताओं ने विद्रोही समूहों के साथ गठबंधन करके बर्मी सेना को देश के कई इलाकों से खदेड़ दिया है। देश में वैधानिक व्यवस्था के सुचारु संचालन के लिए कोई भी जिम्मेदार निकाय न होने से हिंसा और अराजकता बढ़ गई है। 'जुंटा' शासन और विद्रोही गुटों के बीच चल रही लड़ाई राजधानी यांगून तक पहुंच गई है। विद्रोही समूहों ने म्यांमा की सेना को कड़ी चुनौती देते हुए हवाई अड्डे, वायु सेना अड्डे और सैन्य मुख्यालय पर ड्रोन से हमला कर संकेत दिया है कि म्यांमा की सेना कमजोर पड़ गई है और इससे इस देश के टूटने का खतरा बढ़ गया है। म्यांमा के विद्रोही समूहों के भारत के पूर्वोत्तर के समूहों से मजबूत संबंध रहे हैं, चीन इन्हें बढ़ावा देता रहा है। इसलिए म्यांमा की अस्थिरता भारत की सामरिक समस्याओं को बढ़ा सकती है।

दक्षिण पूर्व एशिया के तमाम देश चीन के दक्षिण और भारत के पूर्व में स्थित हैं। इन देशों पर दुनिया की दोनों महान प्राचीन सभ्यताओं का प्रभाव है और भू-राजनीतिक दृष्टि से भी ये देश भारत और चीन के लिए बेहद महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं। म्यांमा जातीय विविधता वाला देश है, जिसमें काचिन, काया, कायिन, चिन, बामर, मोन, रखाइन और शान प्रमुख हैं। ये जातियां अलग-अलग भौगोलिक परिस्थितियों में रहकर अपनी अलग सांस्कृतिक पहचान बनाए रखने के लिए देश की व्यवस्थाओं को प्रभावित करती रही हैं। इस विविधता ने पृथकतावाद को बढ़ावा दिया है, जिसका फायदा चीन ने उठाया है। चीन की दीर्घकालिक रणनीति म्यांमा के सशस्त्र समूहों से संबंध मजबूत करके म्यांमा की सेना या देश की लोकतांत्रिक सरकारों पर दबाव बनाए रखने की रही है। म्यांमा से चीन के गहरे आर्थिक और सामरिक हित जुड़े हुए हैं। चीन के लिए म्यांमा, बंगाल की खाड़ी के जरिए हिंद महासागर तक सीधी पहुंच के कारण रणनीतिक महत्त्व रखता है।

चीन म्यांमा आर्थिक गलियारा चीन की 'बेल्ट एंड रोड' पहल की एक प्रमुख आर्थिक और रणनीतिक कड़ी है। इसे विद्रोही गुट किसी प्रकार निशाना न बना सकें, इस नीति पर चलते हुए चीन ने म्यांमा की सेना और विद्रोहियों पर नियंत्रण तो किया है, लेकिन चीन की यह रणनीति भारत की सामरिक समस्या को बढ़ा सकती है। म्यांमा की सेना देश के कई इलाकों में सुसंगठित जातीय सेनाओं से हार रही है। भारत के लिए म्यांमा की स्थिरता सामरिक और आर्थिक रूप से अति महत्त्वपूर्ण है। भारत की 'पूर्व की ओर देखो' की दशकों पुरानी नीति का संचालन म्यांमा के माध्यम से ही हो सकता है। करीब डेढ़ दशक पहले भारत ने 'कलादान मल्टी माडल ट्रांजिट पोर्ट प्रोजेक्ट' की अति महत्त्वाकांक्षी परियोजना के माध्यम से म्यांमा के साथ अपने हितों को निकटता से जोड़ने की दीर्घकालिक रणनीति पर कार्य शुरू किया था।

यह परियोजना भारत के पूर्वी बंदरगाहों को म्यांमा के सितवे बंदरगाह और आगे पूर्वी भारत को म्यांमा के माध्यम से समुद्र, नदी और सड़क के माध्यम से जोड़ती है।

भारत का पूर्वोत्तर क्षेत्र सामरिक रूप से बेहद संवेदनशील है। इन क्षेत्रों में जातीय विविधता अलगाववाद को बढ़ावा देती रही है। इसलिए अनिवार्य है कि भारत अपने पड़ोसियों के साथ सामंजस्य बनाए। दोनों देश एक-दूसरे के साथ सोलह सौ किमी से अधिक लंबी थल सीमा और बंगाल की खाड़ी में समुद्री सीमा भी साझा करते हैं। म्यांमा भारत और चीन के बीच एक रोधक राज्य का काम करता है। इस देश से भारत को पटकोई पर्वत श्रृंखला, घने जंगलों तथा बंगाल की खाड़ी ने अलग कर रखा है। चीन चाहता है कि वह म्यांमा के रास्ते बंगाल की खाड़ी तक पहुंचे। म्यांमा आर्थिक गलियारा से बंगाल की खाड़ी में चीन अपना प्रभाव बढ़ा सकता है, जिससे उसे हिंद महासागर में रणनीतिक बढ़त हासिल हो सकती है। भारत पूर्वोत्तर की सुरक्षा और व्यापार के लिए संकीर्ण सिलीगुड़ी गलियारे के विकल्प को तलाश रहा है और इसमें म्यांमा से सहयोग पर आधारित परियोजनाओं का पूर्ण होना बेहद जरूरी है।

> **म्यांमा के अस्थिर होने और विद्रोही संगठनों के प्रभाव में आने से पूर्वोत्तर के अलगाववादी संगठन पुनः मजबूत हो सकते हैं। भारत के सामने यह भी चुनौती होगी कि वह म्यांमा में अपने हितों की सुरक्षा के लिए किस पर निर्भर रहे। म्यांमा से लगती सीमा पर पूर्ण बाड़बंदी से पूर्वोत्तर के जातीय समूह नाराज हो सकते हैं, वहीं प्राकृतिक जटिलताओं के कारण यह संभव भी नहीं है। ऐसे में भारत को नए सिरे से अपनी सैन्य रणनीति पर आगे बढ़ने की जरूरत होगी।**

भारत, लोकतांत्रिक सरकार न होने के बाद भी म्यांमा की सेना से संबंध बनाए रखते हुए पूर्वोत्तर के राज्यों में शांति स्थापना के प्रयासों में सफल हो रहा था। मगर अब स्थितियां भारत के अनुकूल नहीं दिख रही हैं। सितवे शहर पर नियंत्रण के लिए म्यांमा सेना और अराकान सेना के बीच लड़ाई चल रही है। अराकान आर्मी म्यांमा के कई जातीय सशस्त्र समूहों में सबसे नए, लेकिन सबसे सुसज्जित समूहों में से एक है और कई वर्षों से राखीन राज्य और पड़ोसी चिन राज्य के कुछ हिस्सों में सेना से लड़ रहा है। इस विद्रोही समूह ने रखाइन में महत्त्वपूर्ण बढ़त हासिल कर ली है। अब वह इस क्षेत्र में बहुत मजबूत है और म्यांमा की सेना को इन क्षेत्रों से भागना पड़ा है। रखाइन म्यांमा के दक्षिण पश्चिम में स्थित, बंगाल की खाड़ी का तटवर्ती और पश्चिमोत्तर में बांग्लादेश का सीमावर्ती राज्य है। म्यांमा के उत्तर पश्चिमी तट पर बसा सितवे, रखाइन प्रांत की राजधानी है। सितवे बंदरगाह को लेकर कलादान परियोजना के सफल होने से भारत के पूर्वोत्तर हिस्सों में, बल्कि उत्तरी और मध्य म्यांमा में नए व्यापार, परिवहन और व्यवसाय को बढ़ावा मिल सकता है। बंगाल की खाड़ी से लगे रखाइन प्रांत और पूर्वोत्तर से लगे चिन प्रांत के बड़े हिस्से अब विद्रोहियों के कब्जे में आ चुके हैं।

भारत का पूर्वोत्तर का इलाका दशकों से अलगाववादी विद्रोहों से प्रभावित रहा है। पूर्वोत्तर भारत के कई विद्रोही गुटों ने म्यांमा के सीमावर्ती गांवों और कस्बों में अपने शिविर बना रखे हैं। ये विद्रोही समूह गुप्त स्रोतों से चीन म्यांमा सीमा पर हथियार हासिल करते हैं। म्यांमा के अस्थिर होने और विद्रोही संगठनों के प्रभाव में आने से पूर्वोत्तर के अलगाववादी संगठन पुनः मजबूत हो सकते हैं। भारत के सामने यह भी चुनौती होगी कि वह म्यांमा में अपने हितों की सुरक्षा के लिए किस पर निर्भर रहे। म्यांमा से लगती सीमा पर पूर्ण बाड़बंदी से पूर्वोत्तर के जातीय समूह नाराज हो सकते हैं, वहीं प्राकृतिक जटिलताओं के कारण यह संभव भी नहीं है। ऐसे में भारत को नए सिरे से अपनी सैन्य रणनीति पर आगे बढ़ने की जरूरत होगी।

म्यांमा में तेल और ऊर्जा के असीम भंडार हैं। चीन इनका दोहन करना चाहता है और विद्रोही गुटों के लिए यह आय का प्रमुख साधन बन सकता है। पूर्वोत्तर में भारत के महत्त्वपूर्ण साझीदार रहे म्यांमा में सेना के कमजोर होने से इन राज्यों में अलगाव का एक नया दौर फिर शुरू हो सकता है। बहरहाल, भारत को म्यांमा में शांति स्थापित करने के लिए गंभीर कूटनीतिक प्रयास करने की जरूरत है।

जल है तो कल है

रेखा शाह आरबी

इस संसार में प्रकृति द्वारा प्रदान की गई सभी चीजें अमूल्य हैं। उनका हम चाह कर भी मूल्य नहीं चुका सकते हैं और न ही हम उन चीजों का उसी रूप में निर्माण कर सकते हैं। मनुष्य प्रसन्न हो सकता है कि उसके रूप को अनेक प्रकार से परिवर्तित कर सकता है, लेकिन मूल आधार प्रकृति द्वारा दी हुई चीज ही रहती है। मसलन, हम जल का निर्माण नहीं कर सकते। इसीलिए सभ्यता की शुरुआत से ही जल की महत्ता को एक स्वर से स्वीकार किया गया है। सृष्टि के निर्माण में अग्नि तत्त्व के पश्चात जल का ही सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान है। इंसानों के लिए हो सकता है कि अमृत बहुत ही दुर्लभ चीज हो। मगर शायद यह पानी और अन्य प्राकृतिक जीवन तत्त्वों का ही प्रतीक शब्द हो।

संभव है कि पानी के संकट पर बात करने को लेकर अब लोग हल्के तौर पर लेने लगे हों, लेकिन यह भी ध्यान रखने की जरूरत है कि शहर से लेकर गांव तक अब इस संकट को सामने खड़ा देखा जा सकता है। शहरों-महानगरों में कुदरती स्रोतों से पीने का पानी हासिल करना मुश्किल हो गया है और लोग प्यास बुझाने के लिए बोतलबंद पानी या फिर 'आरओ' जैसे मशीन पर निर्भर होते जा रहे हैं और गांवों में भूजल का स्तर सूख रहा है।

पानी के बिना जीवन की कल्पना निराधार है। यह जीव-जंतु सबके जीवन का आधार है। प्रकृति इंसानों को पानी की जगह अमृत भी देती, तो वह भी शायद उतना उपयोगी नहीं होता, जितना उपयोगी सभी जीवों के लिए पानी है। बल्कि यों कहें कि पानी है तो धरती पर जीवन है, हरियाली है, कृषि है, कल-कारखाने चल रहे हैं, रोजमर्रा की जरूरत पानी से ही पूरी होती है। अमृत से मनुष्य के अमर हो जाने की धारणा है। मगर बिना पानी के जीवन की उत्पत्ति ही नहीं होती तो अमरत्व का सवाल कहां से पैदा होता।

हमारे शरीर का सत्तर फीसद जल से ही बना हुआ है। इससे आगे देखें कि शरीर ही नहीं, हमारी पूरी धरती के निर्माण में भी पानी सबसे महत्त्वपूर्ण है। पृथ्वी का दो तिहाई हिस्सा जल से आच्छादित है। हमारा शरीर जीवन की पूंजी जलवायु और भोजन है। अगर इनमें से एक भी चीज न रही, तो हमारा जीवन संकट में पड़ सकता है। इसीलिए कहा गया है कि जल ही जीवन है या फिर जल है तो कल है। 'महाभारत' की कथा के मुताबिक, जब भगवान कृष्ण कौरवों की सभा में शांति दूत बनकर जाते हैं, तब वहां जल का महत्त्व बताते हुए वे कहते हैं कि 'जल की एक बूंद व्यर्थ बहाना भी जल का अपमान है... और आप तो रक्त का सागर बहाने की बात कर रहे हैं।' यहां पर कृष्ण के कथन से यह सार निकलता है कि रक्त भी तो जल से ही बना हुआ है और जब जल की एक बूंद बहाना जल का अपमान है, तो जल का सागर बहाना कितना बड़ा अपमान होगा।

जल का महत्त्व देखते हुए ही शायद इसे देवता का दर्जा दिया गया है, ताकि प्रकृति द्वारा प्रदत्त इस अमूल्य धरोहर के प्रति लोगों के मन में श्रद्धा बनी रहे। यों भी हमारे यहां नदियों को माता के समान माना गया है। ऋषि-मुनियों और महात्माओं के पास जो ज्ञान के अकूत भंडार थे, वे नदियों को संरक्षित और सुरक्षित रखने का आग्रह करते हैं। वे जल को बहुत महत्त्व देते थे, क्योंकि वे अपनी प्राचीन ज्ञान परंपरा से जानते थे कि जल के बिना जीवन की परिकल्पना व्यर्थ है और इसकी बर्बादी का हासिल क्या हो सकता है। जल को संरक्षित करना आखिरकार जीवन को संरक्षित करना है। पिछले कुछ समय से धरती पर जो जल संकट देखा जा रहा है, वह प्रकृति की नहीं, मनुष्य की कारगुजारी है। प्रकृति ने तो हमें शुद्ध जल दिया था। यह हाल तब है जब धरती पर पीने के योग्य पानी की मात्रा सिर्फ तीन फीसद है और उसमें से भी दो फीसद ग्लेशियर और बर्फ के रूप में है। इसलिए देखा जाए तो मनुष्य को मात्र एक फीसद पानी ही पीने के लिए उपलब्ध है। अगर किन्हीं हालात में पीने योग्य पानी उपलब्ध न हो तो मनुष्य का क्या हश्र होगा?

अंधाधुंध विकास की जिद, नगरीकरण, औद्योगीकरण, प्रदूषण और बढ़ती जनसंख्या के भार से यह स्थिति हो चुकी है कि प्रत्येक मनुष्य को शुद्ध जल उपलब्ध कराना एक चुनौती बन चुका है। अनेक शहरों में पानी के टैंकर ही पेयजल की आपूर्ति के साधन बन चुके हैं। उसकी भी शुद्धता की कोई गारंटी नहीं है और प्रदूषित पानी पीने से लोग अनेक रोगों के प्रकोप का शिकार बन रहे हैं। नदियों और झीलों पर मनुष्य का अतिक्रमण और खराब सीवर उपचार जल संकट को और बढ़ा रहा है। बंगलुरु का उदाहरण आंखों के सामने है, जो तीस-चालीस वर्षों के सबसे खराब सूखे का सामना कर रहा है। अगर इसी तरह हम देशभर में कंक्रीटी संरचना और पक्की सतहों का निर्माण करते रहे तो जल प्रसार के क्षेत्र में भारी गिरावट का सामना करना पड़ेगा। वहीं धरती का भूजल स्तर कम होता रहेगा।

चाहे हम जितने आधुनिक बन जाएं और विज्ञान के मामले में तरक्की कर लें, लेकिन पीने के लिए शुद्ध जल की आवश्यकता मनुष्य को हमेशा रहेगी। उसके लिए हमें जल स्रोतों को संरक्षित करना ही पड़ेगा, नदियों की देखभाल करनी पड़ेगी। नदियां शुद्ध पेयजल का सबसे अच्छा स्रोत हैं। अफसोस कि आज शायद ही कोई ऐसी नदी हो, जिसका पानी पीने योग्य रह गया हो। लोग नदी में नाले, अपशिष्ट, कचरा बहा कर उनको प्रदूषित कर रहे हैं। यह समय हम सभी के सचेत होने का है, वरना पीने योग्य शुद्ध पानी की हर बूंद के लिए तरसना हम लोगों की नियति बन जाएगी।

दुनिया मेरे आगे

> **अंधाधुंध विकास की जिद, नगरीकरण, औद्योगीकरण, प्रदूषण और बढ़ती जनसंख्या के भार से यह स्थिति हो चुकी है कि प्रत्येक मनुष्य को शुद्ध जल उपलब्ध कराना एक चुनौती बन चुका है। अनेक शहरों में पानी के टैंकर ही पेयजल की आपूर्ति के साधन बन चुके हैं। उसकी भी शुद्धता की कोई गारंटी नहीं है।**

हिंसा का सिलसिला

जिन लोगों ने प्रथम विश्व युद्ध शुरू होने से लेकर द्वितीय विश्वयुद्ध के खत्म होने तक के काल में लाखों की संख्या में मर्द, औरत और बच्चों को कत्लेआम होते देखा और सुना होगा, उन लोगों ने जरूर सोचा होगा कि दुनिया में इतना बड़ा संहार फिर कभी न हो। यहूदियों का नाजियों द्वारा किया जनसंहार अंतिम नहीं था। उसके बाद भी यह सिलसिला बदस्तूर जारी रहा और कोरियाई युद्ध में पच्चीस लाख लोग मरे। वियतनाम युद्ध में इकतीस लाख जानें गईं। उसके बाद इराक और अफगानिस्तान के आक्रमणों से पांच लाख लोग असमय मृत्यु का शिकार हो गए। फिर अफ्रीकी देश रवांडा के सामूहिक कत्लेआम को नहीं भूला जा सकता है। वह देश इस समय 1994 के संहार के तीस साल पूरे होने पर एक सप्ताह का शोक मना रहा है। सिर्फ जुलाई 1994 में रवांडा पैट्रियाटिक फ्रंट के विद्रोही मिलिशिया द्वारा किगाली पर कब्जा करने से सौ दिन पहले तक चली हत्या की होड़ में लगभग आठ लाख लोगों की जान ले ली गई, जिनमें बड़े पैमाने पर तुत्सी जनजाति के लोग थे। इसमें उदारवादी हुतु भी शामिल थे। मनुष्य जबसे इस धरती पर आया है, तबसे वर्चस्व के लिए एक-दूसरे को मारता रहा है।

– जंग बहादुर सिंह, गोलपहाड़ी, जमशेदपुर

सुविधा का पक्ष

वर्तमान समय में नेता पार्टी की विचारधारा से अलग स्वयं के फायदे के लिए पार्टियों में अदला-बदली करते रहते हैं। जब तक उसको फायदा मिलता है, वह एक पार्टी का भक्त बना रहता है, जब उसे फायदा मिलना बंद हुआ तो वह पाला बदलने में जरा भी देरी नहीं लगाता है। लोकतंत्र में संवाद की संस्कृति का अत्यंत महत्त्व है, पर दल-बदल विरोधी कानून की वजह से पार्टी की राय से अलग, लेकिन महत्त्वपूर्ण विचारों को नहीं सुना जाता है। अन्य शब्दों में कहा जा सकता है कि इसके कारण अंतर-दलीय लोकतंत्र पर प्रभाव पड़ता है और दल से जुड़े सदस्यों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता खतरे में पड़ जाती है। कई नेता पार्टी समर्थक राजनीति को एक नौकरी की तरह मानते हैं। वे किसी भी एक दल में तभी तक रहते हैं जब तक वहां रहना उनके अनुकूल होता है। दलबदलू नेता यह कभी नहीं बताते कि वे जिन खामियों का उल्लेख करते हुए दल बदलते हैं, उनका आभास उन्हें चुनावों की घोषणा होने के बाद ही क्यों होता है?

– योगेंद्र गौतम, उन्नाव

सियासी गिरावट

चुनाव आते ही अगर नेताओं का एक दूसरे दलों के खिलाफ आरोप-प्रत्यारोप होना स्वाभाविक है, लेकिन उसकी भाषा मर्यादाहीन हो और आखिर उन्हें ही फिर सफाई में कहना पड़े कि मैंने ऐसा नहीं कहा, बल्कि तोड़मरोड़ कर पेश किया गया तो उन्हें खुद अपने बयानों पर सोचना चाहिए। दरअसल, महिलाओं का मजाक उड़ाने या सम्मान को चोट पहुंचाने वाले कुंठाग्रस्त लोग होते हैं। दूसरे दल की महिलाएं उनकी दुश्मन नहीं है, तो विचारधारा सिद्धांत और नीति का विरोध गरिमामय शब्दों से भी हो सकता है। हो रही सियासी गिरावट को चुनाव आयोग संज्ञान लेकर भी कठोर कार्रवाई नहीं करता। कानूनी कार्रवाई के अलावा खुद ही सुधरने और पार्टी से शीर्ष नेतृत्व की ओर सुधारे जाने की जरूरत है।

– बीएल शर्मा 'अकिंचन', मप्र

मतदान और उत्सव

'मतदान की दर' (संपादकीय, 8 अप्रैल) अत्यंत सामयिक और विचारोत्तेजक है। सरकार, चुनाव आयोग, राजनीतिक दलों और विभिन्न स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा समय-समय पर चलाए जाने वाले प्रेरक जन जागरूकता अभियानों के बावजूद और मतदान के दिन सार्वजनिक अवकाश घोषित किए जाने के बावजूद देश की अक्सर जनता में मतदान के प्रति वांछित सक्रियता नहीं दिखती अथवा उतना उत्साह नजर नहीं आता, जितना होना चाहिए। राजनीतिक चश्मे से देखने पर कम या अधिक मतदान के मायने अलग-अलग हो सकते हैं, लेकिन सामान्य अर्थों में तो मतदान देश के नागरिकों का अत्यंत महत्त्वपूर्ण दायित्व, कर्तव्य और अधिकार है। बहरहाल, बेहतर है कि हम पूरे होशो-हवास, विवेक, बुद्धिमत्ता और उत्साह से अपने मताधिकार का उपयोग करें और फिर इसका जश्न मनाएं।

– इशरत अली कादरी, भोपाल

www.readwhere.com